अध्याय–तृतीय

मैत्रेयी पुष्पा के उपन्यासों में अभिवक्त भारतीय ग्रामीण समाज

अध्याय–3

मैत्रेयी पुष्पा के उपन्यासों में अभिव्यक्त भारतीय ग्रामीण समाज

ग्रामीण जीवन की धूल–मिट्टी से बने अनुभव संसार मे मैत्रेयी पुष्पा ने सबसे अधिक प्राथमिकता नारी की स्थिति को ही दी है। उनका लेखन यह सिद्ध करता है की वे स्त्री–पुरुष समानता की पक्षधरता की वकालत करती है। उन्होंने ग्रामीण स्त्री के गिरने, उठने संभलने के साथ अपने लक्ष्य ने की ऐसी इबारत रची है जो साहित्य जगत मे अवेक्षणीय है।

मैत्रेयी पुष्पा का उपन्यास चाक जहॉ उनके उपन्यास इदन्नमम का प्रगतिशील विस्तार है, वहीं अपने में स्वतंत्र भी। गांव के समाज में नारी की पीड़ा तथा उसके संघर्ष को वर्णित करता यह उपन्यास संवेदनाओं से युक्त है। औरतों के अतीत और वर्तमान के जुल्म की कथा को सूचनात्मक रूप में दिया गया है कि इतिहास कागज के पन्नों पर उतरने से पहले मानव शरीरों पर लिखा जाता है। स्वतंत्रता के 74 वर्षों के पश्चात् भी गांव की स्त्रियों की स्थिति यथावत् बनी हुई है, उसमें कोई भी परिवर्तन नहीं आया है, किंतु चाक में सामाजिक बंधनों को तोड़ने का प्रयास किया गया है, उन संस्कारों को समाप्त करने का प्रयास किया गया है, जो स्त्रियों को दबाने व शोषण करने के लिए बनाये गए हैं।

चाक अर्थात् समय–चक्र। चक्र निर्माण भी करता है और विनाश भी किंतु इसके साथ वह समय का साक्षी भी होता है। उपन्यास का उद्देश्य उसके शीर्षक द्वारा जाना जा सकता है। पहले से चले आ रहे सामाजिक रूढ़ियों व संस्कारों में जब भी परिवर्तन होता है तो कुछ मूल्य और विश्वास टूटते हैं। हर विकास परम्परागत मान्यता अर्थात् रूढि को बदलता और तोड़ता है। उपन्यास चाक में कलावती चाची का संवाद इसी बात को पुष्ट करता है–

“ए भगमान, ऐसा दिन भी आना था जिन्दगानी में। चाल चलन बचाते–बचाते उमर निकल गई पर आज अपने ही मन से सुरग नसैनी चढ़ गई। जिन्दगानी घसीटने वाले ताड़फड़े वाले लल्लू शीश उठाकर ठाड़े हो गए। सात जन्म के पुन्न

कमाए मैंने कि मरता हुआ आदमी जिंदा हो गया। सारंग इससे बड़ा सुख क्या होगा। इतना जबर संतोष' ।[122]

समाज में अपने अस्तित्व, अपने वजूद व आत्मशक्ति की तलाश की जद्दोजहद सिर्फ स्त्रियॉ ही नहीं, कई पुरूष भी करते हैं और उनके इस प्रयास में एक स्त्री बाधक नहीं साधक, राह अन्वेषक बनती है। यहॉ ताड़फड़े कैलासी सिंह ऐसे ही पात्र हैं जो अपने आत्मविश्वास को खोकर स्वयं को एक हारा हुआ पुरूष मानकर जिंदगी के प्रति उदासीन हो बैठे हैं और कलावती चाची एक एसी स्त्री पात्र है जो उन्हें उनका खोया आत्मविश्वास जगाकर उनमें जीवन के प्रति आशा का संचार करती है, उनको ऊर्जावान बनाती है।

मैत्रेयी जी इन पात्रों के माध्यम से यह बताने का प्रयास करती हैं कि स्त्री बिना किसी स्वार्थ के आत्मसंतोष के लिए किसी भी हद तक पुरूष की सहयोगी बन सकती है यदि समाज का उस पर विश्वास व भरोसा रहे।

कलावती चाची का ही एक अन्य संवाद भी इस बात का प्रमाण है कि परंपरागत मान्यता या रूढि को बदलता जो स्त्री के हक में हो।

''अरी हम जाटिनी हैं, जेब में बिछिया धरे फिरती हैं। मन आया ता के पहर लिए। कौन सी पल्लौ (प्रलय) हो गई?''[123]

भारतीय रीतिरिवाज में विवाह संबंधित कई चिह्न या मान्यतां हैं जिसे एक विवाहित स्त्री धारण करती है या प्रयोग करती है। यहां समाज की ऐसी ही रीति रिवाजों को चुनौति दी जाती है, जो मैत्रेयी जी अपने पात्रों के माध्यम से जगह–जगह दिखाती हैं।[124]

बिछिया जेब में लेकर घूमना और मन करे तो पहन लेना' इस बात को दर्शाता है कि समय का चाक अब बदल चुका है और निर्णय करने की बारी तो अब स्त्रियों की है कि वे कब वरण करें या त्यागें। चुनाव व वरण करने का जो अधिकार सिर्फ पुरूषों के पास था इसे चुनौती देते हुए वरण के अधिकार को अपने हक में

---

122 मैत्रेयी पुष्पा, चाक, पृ० 56 डॉ0 रमण भाई पटेल – सातवे दशक के हिन्दी उपन्यास, पृ0 28

123 वही, पृ0 35

124 वही, पृ० 56

रखने के प्रखर स्वर को सशक्तता से समाज के सामने रखने की वकालत मैत्रेयी जी करती हैं।

चाक में गांव का बदलता रूप विडंबना को दर्शाता है। चाक में स्त्री की अपनी सोच है और वो विकास के लिए संघर्ष करने से पीछे नहीं हटती। इसमें सिर्फ अतरपुर गांव की कथा ही नहीं बल्कि भारत के सभी पिछड़े गांव का दस्तावेज है। अपने रीति–रिवाजों, जाति संघर्षों, गीतों, उत्सवों, नृशंसताओं, प्रति हिंसाओं प्यार, ईष्या और कर्मकांडी अंधविश्वासों के बीच धड़कता हुआ अतरपुर गॉव सारंग और रंजीत के आपसी संबंधों के उतार–चढ़ाव में समय को आत्मसात कर रहा है–''सारंग पूछना चाहती है–रंजीत मैंने तुम्हारी कही हुई बात ही तो व्यवहार में उतार दी। तुम उसे चाल–चलन खराब होना मान बैठे। सफाई दूँ भी तो क्या कहकर?''[125]

पत्नी पति की अनुगामी बनती है। अपने पति की कही हुई बातों, आदर्शों, विचारों, लोक–व्यवहार आदि से प्रभावित होकर ही वह उन्हें अपने आचरण में ढालने का प्रयत्न करती है। समाज को देखने का नजरिया भी वह पति के अनुरूप ही बनाती है, परंतु इस सबके बावजूद भी जब उसे अपने व्यवहार की उलाहना मिलती है या उसपर कटाक्ष किया जाता है तो वह स्वयं को पराजित व अपराधी महसूस करने लगती है और यह सोचने पर विवश हो जाती है कि वास्तव में चूक कहां हो गई।

मैत्रेयी जी इसी बात को बताने का प्रयास करती हैं कि हर हाल में खरबूजे को ही कटना है अर्थात चाकू खरबूजे पर गिरे या खरबूजा चाकू पर। इसी प्रकार इस पुरूष वर्चस्ववादी समाज में स्त्री ही हर हाल में पीड़ित होती है।

इसी प्रकार सारंग के मन में चलनेवाला एक अन्य अंतरूसंवाद जो उसके अंतर्द्वंद्व का कारण बनता है–'कभी–कभी इतने कठोर हो जाते हैं रंजीत कि उन्हें पहचानना मुशकिल पड़ता है। उनकी नीयत का खुलासा ऐसी घडियों में होगा, कहां

---

125 मैत्रेयी पुष्पा, चाक, राजकमल प्रकाशन, दिल्ली, प्रथम संस्करण–2004 पृ० 56

पता था? इतने दिनों किस भ्रम में रही फिर? प्राणों से प्यारा पति दुश्मन हो उठेगा, यह समय की खोट है कि मेरा?'[126]

(क) भारतीय ग्रामीण समाज की वर्गीय स्थिति

मैत्रेयी पुष्पा ने मध्य वर्गीय परिवार में जूझती नारी के संघर्ष और द्वंद्व को नवीन रूप में प्रस्तुत ही नहीं किया अपितु उसमें नयी दिशा भी दी है। ये स्त्रियाँ अपने अधिकारों के प्रति संघर्ष और द्वंद्व के प्रति पूर्ण रूप से सजग हैं। इस सृष्टि का शाश्वत सत्य है। प्रकृति में विभिन्न स्तरों पर यह संघर्ष निरंतर चलता रहता है।

कथा साहित्य में मैत्रेयी पुष्पा का अपना महत्वपूर्ण स्थान है। उन्होंने अपने उपन्यासों में वर्तमान सामाजिक, राजनीतिक, धार्मिक, दार्शनिक और नैतिक समस्याओं को नवीन दृष्टि से देखा और चित्रित किया है। मैत्रेयी पुष्पा ने मध्य वर्गीय परिवार में जूझती नारी के संघर्ष और द्वंद्व को नवीन रूप में प्रस्तुत ही नहीं किया अपितु उसमें नयी दिशा भी दी है। मैत्रेयी पुष्पा ने उपन्यासों में विद्रोह के साथ सामन्तीय संस्कारों, आर्थिक, पारिवारिक संबंधों में नवीन वैचारिक दृष्टि को अपनाया है। मैत्रेयी पुष्पा के उपन्यासों में लोक संस्कृति, संस्कार आदि का अंकन भी किया गया है।[127]

मैत्रेयी पुष्पा ने अपने उपन्यासों में समय को ध्यान में रखते हुए उसमें उत्पन्न संघर्ष और द्वंद्व को चित्रित किया है। इनकी रचनाओं 'स्मृति दंश'(1990), 'बेतवा बहती रही' (1993), 'इदंन्मम' (1994), 'चाक' (1997), 'झूलानट' (1999), 'अल्मा–कबूतरी' (2000)। 'अगनपाखी' (2001), विजन' (2002), 'कबूतरी कंडुल बसै' (2002), 'कही ईसुरी फाग' (2006) मैत्रेयी पुष्पा ने अपने उपन्यासों में स्त्रियाँ विषम परिस्थितियों में सफलतापूर्वक संघर्ष करके अपने वर्चस्व को स्थापित करती है। ये स्त्रियाँ अपने अधिकारों के प्रति संघर्ष और द्वंद्व के प्रति पूर्ण रूप से सजग हैं।

उपन्यास 'आँगनपाखी' में मैत्रेयी पुष्पा ने नायिका भुवनमोहिनी के माध्यम से संघर्ष की स्थिति को उभारा है। भुवन मोहिनी का विवाह आर्थिक स्थिति अच्छी न होने के कारण मानसिक रूप से पागल लड़के के साथ करवा दिया जाता है। भुवन

---

126 मैत्रेयी पुष्पा, चाक, राजकमल प्रकाशन, दिल्ली, प्रथम संस्करण–2004 पृ० 42
127 डॉ0 नीरज खरे– बीसवीं सदी के अंत में हिन्दी कहानी, क्लासिकल पब्लिशिंग कम्पनी, नई दिल्ली।

मोहिनी के पिता की मृत्यु के बाद माँ अपनी आर्थिक स्थिति को ध्यान में रखते हुए विक्षिप्त लड़के से भुवन–मोहिनी का विवाह तय कर देती है। इस बात का पता भुवन को नहीं था ना ही उस से पूछा गया। सुसराल जाने के बाद उसे इस बात का पता चलता है तो वह दोबारा सुसराल जाने से मना कर देती है। यही से उस के संघर्ष की स्थिति जन्म लेती है। नायिका कहती है कि ''ये गहने धरो चाहे लौटा दो, लाखों के होगें। पर एक खरी बात सुन लो, भले टका की सही। मैं वहाँ जाने वाली नहीं।''[128]

''तेरी नानी सकते में आ गयी, बोली–काए, काए नहीं जाएगी सासरे?

भुवन ने माँ की आँखों में आँखें डालकर कहा पता है तुम्हें, पर मेरे मुँह से सुन लो, वह सिर्री है, पागल।''[129]

भुवन मोहिनी शुरू से ही हिम्मती, जागरूक लड़की के रूप में प्रस्तुत की है। लड़की होने का उसे कोई अफसोस नहीं है। वह अपने सभी कार्य आत्मविश्वास से पूर्णतः पूर्ण कर लेती है। मैत्रेयी पुष्पा ने नायिका भुवनमोहिनी में जो आत्मविश्वास को दिखाया है। भुवनमोहिनी का विश्वास से पूर्ण रूप देखते ही बनता है। जब वह कहती है कि वह आगे बढ़ आई। सफेद दांत निकालकर हँसती हुई बोली बढ़ आगे, मैं तेरे बैलों को रोक लूँगी। कहकर भुवन ने दोनों बैलों के सींग पकड़ लिएं और ऐसे देखा जैसे गाड़ी न रोकी हो, हमें रोक दिया हो।

उपन्यास में भुवनमोहिनी अपने अधिकारों के प्रति समर्थन को व्यक्त करती दिखाई देती है। वह विवाह को भी प्रमुख अधिकारों में से एक अधिकार मानती है। शारीरिक व मानसिक रूप से सही व्यक्ति से विवाह करना उसका अधिकार है। अयोग्य पुरुष के साथ विवाह करने से अच्छा उसे छोड़ देना ही स्त्री के हित में है। भुवन भी पागल पति के साथ अपना जीवन खराब करने से अच्छा उसे छुटकारा पा लेना ज्यादा बेहतर मानती है।

और भुवन पूछ रही थी अम्मा ब्याह करना पाप नहीं तो ब्याह छोड़ना क्यों पाप है? तुम अपने ऊपर पाप मत चढ़ाओ, तुम्हें तो वर के बारे में कुछ पता ही नहीं था। अब मैं अपनी अक्ल के हिसाब से जो भी करूँ। नरक स्वर्ग मेरे लिए बनेगा।

---

128 मैत्रेयी पुष्पा, अगनपाखी, वाणी प्रकाशन, नई दिल्ली, 2001 पृ० 44
129 वही, पृ० 25

(भुवन) वह किसी बात से घबराती नहीं है। हर बात, वह कार्य करने की क्षमता व जिज्ञासा उसमें पूर्णतः है। शक्ति और साहस में लड़कों के समान है। वह इसीलिए दबकर नहीं रह सकती क्योंकि वह स्त्री है। उसे कोई कुछ भी कहता है तो उस के प्रति वह अपनी प्रतिक्रिया दिखाए बिना नहीं रहती है।

अपनी भुवन कैसी ताकतवर बेटी थी। वह यहाँ बाग के मालिक और मुखिया के नाती बेटा उस से थर्राते थे। याद है वह किस्सा मुखिया के नाती की छाती पर लात।।

स्त्री को मात्र जरूरत की वस्तु न मानकर, उसे इन्सान समझना ही स्त्री का समर्थन करता है।

'अगनपाखी' में नायिका भुवन अपने हक के लिए भी लड़ती हुई दिखाई पड़ती है। अपने जीवन को सुचारू रूप से चलाने के लिए वह जमीन–जायदाद में भी अपनी दावेदारी के लिए अर्जी दे देती है –

"कचहरी से अर्ज है कि अपने पति की जायदाद का हक मुझे सौंपा जाएं मैं कुँवर अजय सिंह की हकदारी पर सख्त एतराज करती हूँ।"[130]

उपन्यास 'अल्मा कबूतरी' में मैत्रेयी पुष्पा ने स्त्री को अनेक प्रकार के संघर्षों के गुजरना पड़ता है, पीड़ाएँ सहनी पड़ती है, इतना सब होने पर भी वह अपने पुत्र को शिक्षा दिलवाती है।

"विद्या का दामन थामा है तो बेबसी और बदंरगतों (विद्या) से गुजरना होगा। माँ के घावों पर जैसे रामसिंह की छोटी–छोटी उँगलियों ने स्याही लेप दी हो। कटे–फटे बदन के चलते भी मोरनी–सी नाची फिरती। समय जाँच रहा था – औरत में कितनी ताकत है। भूरी समझ रही थी, बेटे का उजाले–भरा रास्ता माँ की देह से गुजर रहा है।"[131]

नायिका 'अल्मा' अपने पिता की इच्छा पूरी करते–करते निरन्तर शोषित और पीड़ित होती गई। पिता के सपने के कारण वह अपने आपको अपने अस्तित्व को मिटाती–बर्बाद करती चली गई।

---

130 मैत्रेयी पुष्पा, अखनपाखी, वाणी प्रकाशन, नई दिल्ली, 2001 पृ० 7

131 मैत्रेयी पुष्पा, अल्मा कबूतरी, राजकमल प्रकाशन, नई दिल्ली, 2000 पृ० 15

उपन्यास 'इदन्नम' में पात्र कुसुमा अपनी वैवाहिक जीवन से खुश न होकर स्वयं अपने ससुर को अपने जीवन साथी के रूप में चुनती है। कुसुमा तर्क देती हुई कहती है कि पति के घर में यशपाल से संबंध बना ही नहीं तो फिर इस घर में कोई भी संबंध किसी से नहीं मेरा। वह पूर्ण रूप से अपने संघर्ष को दर्शाती हुई कि उस ने जो भी किया ठीक किया है।

कस्तूरी कुण्डल बसै, मैत्रेयी पुष्पा का आत्मकथात्मक उपन्यास है। इसमें लेखिका ने अपनी जीवन से जुड़ी हुई घटनाओं को प्रस्तुत किया है। लेखिका ने इस उपन्यास में अपनी माँ कस्तूरी के जीवन संघर्ष को दिखाया है। यह उस समय की बात है जब स्त्री का स्वतंत्र अस्तित्व नहीं था। उन्हें धान का पौधा कहा जाता था कहने का तात्पर्य स्त्री का जहाँ जन्म होता है और दूसरी जगह जहाँ उसे शादी कर भेज दिया जाता है। तब उसे वहाँ पूर्ण रूप से अपने आप को व्यवस्थित करना पड़ता है। कस्तूरी इन बातों से सहमत नहीं थी कि स्त्री का जीवन का आधार यही है कि शादी करे, बच्चे पैदा करे, खाये–पीये और पूर्ण रूप से अपने आप को उस वातावरण में ढाल लें।[132]

मैं धान का पौधा हूँ सोचकर वह हँस पड़ी। अनपढ़ अज्ञान भाभी खुद धान का पौधा बन गई है। यहाँ रुपने की शर्त में चाँदी–सोना माँगती है। यही है औरत की जिंदगी का सार।

उपन्यास में लेखिका ने अपने दृष्टिकोण से स्त्री की इच्छा का कोई महत्व नहीं है? कस्तूरी की इच्छा के विरुद्ध उसका विवाह कर दिया जाता है। जब उसे इस बात पर पता चलता है कि उसका विवाह विक्रय करके हुआ है तो वह आक्रोश और पीड़ा से भर जाती है।

हम तो सोच रहे थे नई छोरी की तरह शरमा रही है, पर तू तो जोर आजमा रही है। तेरे भइया ने खनखनाते चाँदी के कलदार वसूले हैं, मुफ्त में नहीं आई सो नखरे पसार रही है।

कस्तूरी ने समाज की परवाह करे बिना अपने ससुर से बातचीत आरम्भ कर दी। नए से अपनी पढ़ाई आरम्भ की। कस्तूरी प्रतिदिन बैग लेकर गाँव से ढाई कोस

---

132 मैत्रेयी पुष्पा, कस्तूरी कुण्डल बसै, राजकमल पेपर बैक्स, नई दिल्ली, 2012 पृ० 32

दूर इगलास के स्कूल में जाने लगी। स्कूल जानेवाली झोला लटकाए औरत को भौंचक होकर सबने देखा। वह इस कदर परेशान हुई कि किसी को तो क्या, रास्ते के कंकड़–पत्थर और चढ़ाव–उतार तक न देख पाती।

लेखिका ने स्त्री की सुरक्षा को महत्व दिया है। लेखिका ने असुरक्षा के भाव को स्वयं अनुभव किया है। इसे स्वीकार भी किया है कि स्त्री के अनेक संघर्षों में एक संघर्ष अपनी सुरक्षा के लिए होता है।

''भागते–भागते, बचते–बचते सारी ताकत छिन गई, अब वह निखालिस थकान पर है।''[133]

कस्तूरी अपनी बेटी को समझाती है कि अनपढ़ औरतों की तरह सोना–चांदी आदि जेवरों पर विश्वास व लालच मत दिखाना विद्या ही असल में पूंजी है।

लिखा है – ''जेवर मत लाना, उनकी रखवाली कौन करेगा? चाँदी–सोने के छल्ला–चेन अनपढ़ औरतों के लालच होते हैं, उसे ही पूँजी समझती है। तू पढ़ी–लिखी है। सनद सर्टिफिकेटों की मालकिन। विद्या का खजाना तेरे हाथ है।''[134]

'कहीं ईसुरी फाग' उपन्यास की नायिका ऋतु के पिता की मृत्यु के पश्चात् भी वह इतना पढ़ लिख पायी। ऋतु और उसकी माँ ने कभी भी परिस्थितियों से समझौता नहीं किया अपितु सदैव संघर्ष ही किया। वह अपनी बेटी को शिक्षा दिलवाकर उसे उच्च शिखर पर देखना चाहती थी।

उपन्यास 'चाक' में न्याय के लिए संघर्ष की कथा है। नायिका रेशम और उसकी फुफेरी बहन का रिश्ता एक ही जगह होता है। किन्हीं कारणों से रेशम के पति की मृत्यु हो जाती है। और रेशम विधवा होने के बाद गर्भवती होती है। सास के सभी आग्रहों को ठुकराने के बाद उस की बहन अपने घर आने को कहती है। किन्तु वह मना कर देती है। रेशम की मृत्यु करवा दी जाती है। सारंग उसे न्याय दिलवाना चाहती है उसे पता है कि ''वह मृत्यु नहीं हत्या है। काश यह मौत होती। मगर यह हत्या। पतित स्त्री, गर्भिणी औरत की हत्या।''[135]

---

133 मैत्रेयी पुष्पा, कस्तूरी कुण्डल बसै, राजकमल पेपर बैक्स, नई दिल्ली, 2012 पृ० 37

134 वहीं, पृ० 67

135 मैत्रेयी पुष्पा, चाक, राजकमल प्रकाशन, दिल्ली, प्रथम संस्करण–2004 पृ० 56

'चाक' उपन्यास की नायिका सारंग की बहन की हत्या ससुराल वाले कर देते हैं। सारंग उन सबको सजा दिलवाने के लिए संघर्ष करती है। वह यह भी चाहती है इस सब मैं गाँव वाले उसका साथ दें। मेरे ससुर गजाधर सिंह, चचिया ससुर खूबराम, ग्राम प्रधानुते सिंह, पुराने जंमींदार नंबरदार, ग्रामसेवक भवानदास, पंडित चरनसिंह से लेकर ऊंची–नीची कौमों के तमाम बूढ़े–बड़े मासूम क्यों रह गए? इनकी जिह्वा क्यों लडखड़ा गई?

'झूलानट' में मैत्रेयी पुष्पा ने उपन्यास की नायिका शीलो साधारण स्त्री है जो गाँव में रहती है। नायिका शीलो परिस्थितियों के आगे घुटने नहीं टेकती बल्कि उसका सामना करती है। शीलो अपने वैवाहिक जीवन से खुश नहीं है क्योंकि उसका पति हमेशा उस की उपेक्षा करता रहता है। पति का मन परिवर्तित करने के लिए निरन्तर संघर्ष करती है। वह अनेक तप, जप करके उस के मन में अपना स्थान बनाना चाहती है लेकिन सभी प्रयास विफल हो जाते हैं। धीरे–धीरे वह अपने आपको घर के अन्य कार्यों में मन रमा लेती है। अब वह पति के प्रति प्रेम–भाव न होकर बल्कि अपनी अस्मिता के लिए संघर्ष करती है। अब वह घर के पूरे कर्तव्य व अधिकार को अपने हाथ में ले लेना चाहती है।

"बछिया करा देतीं, तो यह सींग पैना कर खड़ी हो आती! छोटा सा पशु ही इस को बेदखल कर देता सारे हक से। पूरा गाँव गवाह होता पर अम्मा, दो–चार हजार रुपय का लोभ करके तुमने हमें चित्त कर दिया। अरे! मुझसे सवाल करतीं, तो मैं भेज देता। अब भुगत लो, लाखों की जायदाद पर दाँत गाड़े बैठी है।"[136]

उपन्यास 'विजन' में नायिका नेहा शिक्षित युवती है। नेहा आँखों की डॉक्टर है। परिवार में पति और ससुर भी इसी व्यवसाय से संबंधित है। पति और सुसर ने मिलकर अपना 'आई सेंटर' भी खोल रखा है जिसका महत्व केवल अपनी जेबें भरना है। नेहा इस बात पर अपनी प्रतिक्रिया व्यक्त करती है तो वह उस के लिए अनेक रूकावटें पैदा करते हैं। नेहा अपनी परिस्थितियों से समझौता तो कर लेती है पर उसका संघर्ष जारी रहता है –"मैं अकेली रह गई, निपट अकेली इस घर में न मुड़ने वाले कानून, इस घर की मालकिन के मितभाषी, कठोर नियम, इस घर के

---

136 मैत्रेयी पुष्पा, 'झूलानट, राजकमल प्रकाशन, 1999 ई0 नयी दिल्ली पृ० 56

बेटे का संस्कारित व्यक्तित्व शौर शरण आई सेंटर को वारिस के वारिस की जरूरत, एक चक्रव्यूह बन गया आभा दी, नेहा ने सजरीं के कितने ही दाँवपेंच, स्टैप्स और रुल्स सीखे हों, इस व्यूह के भेदन में अभिमन्यू की तरह ही मारी गई।''[137]

मैत्रेयी पुष्पा ने अपने सभी उपन्यासों में स्त्री पात्र के जीवन में आई स्थिति–परिस्थिति, घटनाओं में द्वंद्व को चित्रित किया है।

उपन्यास 'अगनपाखी' में चंदर की नौकरी ठाकुर अजय सिंह के सतत प्रयास द्वारा लग जाती है। इसके बदले वह अपने भुवन का विवाह अजय सिंह के भाई से करवा देते हैं। माँ बड़े पैसों के चक्कर में भी आकर भुवन का विवाह करवा देती है। भुवन भीतर ही भीतर इस द्वंद्व से जूझ रही है। अपनी किस्मत को कोसते हुए कहती है कि ''जिससे प्यार करती थी उससे शादी नहीं हुई और जिससे शादी हुई है उससे मैं प्यार नहीं करती।''[138] वह अपने ससुराल में खुश नहीं है ना ही उनसे किसी भी प्रकार का समझौता नहीं कर पा रही है। ससुराल में सभी भुवन को समझाते हैं कि वह इस पागल को एक बच्चे की तरह समझ कर पाल लें, किन्तु भुवन को इस विषय में सभी बातें खोखली प्रतीत होती है।

अम्मा ब्याह के बाद बच्चा होने में भी नौ महीने लगते हैं, कोई पहले ही दिन से ही पूरे मर्द को अपना बच्चे कैसे मान ले? तुम लोगों की बातें मेरी समझ में नहीं आती। कैसे प्रतिव्रता धरम सिखाती हो? और इस धरम का मतलब मेरी समझ में क्यों नहीं आता?

उपन्यास 'अल्मा कबूतरी' की नायिका अल्मा का द्वंद्व घर की परिस्थितियों से संबंधित है। पिता का मृत्यु और प्रेमी से दूर हो जाने के कारण माँ अल्मा को समाज में रहने के लिए सभ्य व सुशिक्षित बनाना चाहती है। पिता की कामना थी कि वह अल्मा को पढ़ा–लिखाकर अपने जीवन को सही दिशा दें।

अल्मा के पिता की मृत्यु पुलिस व सहयोगी कर्मचारियों ने की। अल्मा के मन में पुलिस व कर्मचारियों के प्रति घृणा व आक्रोश भरा हुआ था। अल्मा कहती है कि कबूतरी होना कोई अपराध तो नहीं है पर इस अपराध की सजा मेरे पिता को क्यों मिली। अल्मां के मन में क्रोध ही उसका द्वंद्व बन गया है। वह अपने परिवार के

---

137 मैत्रेयी पुष्पा, विजन, वाणी प्रकाशन, नई दिल्ली, 2002 पृ० 124

138 मैत्रेयी पुष्पा, अगनपाखी, वाणी प्रकाशन, नई दिल्ली, 2001 पृ० 56

प्रति हुए अन्याय के लिए प्रतिश् शोध लेना चाहती है जो सम्भवतः उस के लिए उत्तरदायी है–

''आप जानते हैं मैं यहाँ क्यों रुकी हुई हूँ? आप समझते हैं कि मैं जिंदा भी क्यों हूँ? बड़ी सीधी बात है, आप लोगों ने मेरी दुनियाँ उजाड़ी है, मैं आप को उजाड़े बिना नहीं मरूँगी। मैं सबको बता दूंगी कि पाप कहाँ पलता है? अपराध कौन लोग करते हैं? सातने और मारने ठेकेदार कौन हैं? मेरे पिता ने इन्हीं बातों से समझौता नहीं करना चाहा था, पर इतना तो समझती हूँ कि हमारे लिए क्या गलत है, क्या सही?''[139]

मैत्रेयी पुष्पा ने अपने उपन्यास 'कस्तूरी कुण्डल बसै' में अपने जीवन में घटी घटनाओं का चित्रण किया है। लेखिका जब 18 दिन की थी, पिता की मृत्यु हो गई। माँ कस्तूरी इस सदमे से उभर कर अपने आप को व्यवस्थित करने में निरन्तर प्रयास करती रहती।

''अब मैं अपनी जिंदगी और बेटी की नन्हीं जान को लेकर ही सोच पाती हूँ मुझे लोग धिक्कार रहे हैं, जानती हूँ धिक्कार किसे अच्छी लगती है? पर कैसे समझाऊँ कि मेरे सामने आने वाले दिन बाघ की तरह मुँहुाड़े खड़े हैं। मैं आने वाली घड़ियों से छुटकारा पाकर बच जाऊँगी? हर हाल में सामना करना पड़ेगा।''[140]

'झूलानट' की नायिका शीलो का द्वंद्व इस प्रकार से है। वह अपने मन में जिसे पति रूप में देखती है उस से उसका विवाह नहीं होता। जिससे विवाह होता है वह पति उसे अपनी पत्नी के रूप में स्वीकार नहीं करता है।

शीलो का पति पेशे से पुलिस में है। शीलो का रूप–सौन्दर्य साधारण है तथा दायें हाथ में छः अंगुलियाँ हैं सास के समझाने पर वह अपने पति को खुश रखने की कोशिश भी करती है। बार–बार उपेक्षा झेलते हुए वह द्वंद्व में घिरी रहती है।

पति सुमेरु के दूसरे विवाह का सुनकर वह आक्रोश व द्वंद्व में आकर अपनी छठी उंगली काट लेती है।

---

139 मैत्रेयी पुष्पा, अल्मा कबूतरी, राजकमल प्रकाशन, नई दिल्ली, 2000 पृ० 35

140 मैत्रेयी पुष्पा, कस्तूरी कुण्डल बसै, पृ० 14

वो पता नहीं, मन–ही–मन किन भावनाओं से लड़ रही थीं? क्या मालूम कि क्या इतने गहरे खंदक मुँसी, अपने–आप से ही लड़ रही थी? चेहरा उठाया, तो अनकही मुठभेड़ दर्ज थी होंठों पर, नाक पर, आँखों में। अंग–इन्द्रियाँ थक–हार गए हों जैसे। मैत्रेयी पुष्पा ने उपन्यासों के माध्यम से मध्य वर्गीय परिवारों में मूल्य–विघटन की स्थिति को चित्रित किया है। उपन्यासों में नारी अनेक संघर्ष व द्वंद्व से जूझती नजर आती है। मैत्रेयी पुष्पा के उपन्यासों में नारी के वर्चस्व के साथ–साथ नवीन सोच, विचार, संघर्ष, द्वंद्व को दृष्टिगत किया है।

3.1 उच्च वर्ग एवं उच्च वर्गीय मनोवृत्ति

समाज में नारियों की परिस्थिति अलग–अलग होती है। अलग–अलग वर्ग की नारियों की परिस्थिति भी अलग–अलग होती है। उच्च वर्ग में रह रही स्त्रियों का जीवन अलग प्रकार का होता हैं उन्हें किसी भी वस्तु के लिए सोचना नहीं पड़ता। लेकिन ठीक इसके विपरीत मध्यवर्गीय नारी की परिस्थिति उच्च वर्ग की नारी की परिस्थिति से भिन्न है। उसे किसी भी काम को करने से पहले सोचना पड़ता है। उसकी जरूरत उसके परिवार पर निर्भर करती है। मध्यवर्गीय नारी ज्यादातर शिक्षित नहीं होती है। जिसके कारण उन्हें जीवन में बहुत–सी समस्याओं को देखना पड़ता है।

मैत्रेयी पुष्पा के स्त्री–विमर्श का प्रधान क्षेत्र हिन्दू समाज है, जिसका वे स्वयं अंग थीं। उन्होंने अपने उपन्यासों में भारतीय स्त्रियों की स्थिति एवं छवि की सामाजिक–सांस्कृतिक परम्पराओं के परिप्रेक्ष्य में जाँच–पड़ताल की है, जहाँ स्त्री के व्यक्तित्व को दबाकर एकांगी बनाने का जाना–बूझा उद्यम हुआ हैं इनके उपन्यासों में सामाजिक परिस्थितियों और समस्याओं का ऐसा पटल है, जिसमें ये परिस्थितियाँ और समस्यायें अभिव्यक्ति पाती है। इसी परिपेक्ष्य में इनके उपन्यास न केवल समाज, बल्कि जीवन का भी दर्पण हैं। लेकिन यह मात्र निर्जीव दर्पण नहीं हैं वे इनमें सामाजिक यथार्थ का चित्रण करती हैं। यह चित्रण पाठक को ही नहीं अपितु पूरी समाज को समान ढंग से प्रभावित करता है।

'इदन्नमम' एवं 'अल्मा कबूतरी' में निम्न वर्ग की स्त्रियों का संघर्ष दिखाई देता है। इस वर्ग की स्त्रियाँ दिन–रात श्रम करने के पश्चात भी अपना पेट भर सकने में असमर्थ रहती हैं। पेट की भूख के कारण, इनकी सारी इच्छाएँ भावनाएँ

मर चुकी होती हैं ओर पेट भरना ही इसका एक मात्र लक्ष्य होता है। यह वर्ग चाहते हुए भी ऊपर नहीं उठ पाता और यदि प्रयत्न भी करता है तो मध्य तथा उच्च वर्ग चाहते हुए भी ऊपर नहीं उठ पाता और यदि प्रयत्न भी करता है तो मध्य तथा उच्च वर्ग उन्हें ऊपर नहीं उठने देता। मालिक लोग मजदूर स्त्रियों को अपनी हवस का शिकार बनाते हैं। उनकी बेटियों पर अपना अधिकार समझते हैं। बेचने से भी नहीं झिझकते। गुबरैला का दृष्टव्य कथन मजदूर स्त्रियों की दयनीय स्थिति को व्यक्त करता है:

"मेहनत मजदूरी छोड़ो, खाना–पीना, भूलों, पर इतेक भारी अत्याचार! "हमारी जनी–मानसें बेची जाने लगी हैं अब। जिन्दे आदमियन का व्यापार करने लगे है। अभिलाख।"[141]

मैत्रेयी जी ने इस उपन्यास के माध्यम से निम्न वर्ग की मजदूर स्त्रियों के संघर्ष को व्यक्त करने के साथ–साथ बालिका विक्रय जैसी समस्या की ओर भी ध्यान दिलाया है।

3.2. मध्यवर्ग एवं मध्यवर्गीय मनोवृत्ति

आंचलिक उपन्यासकारों ने नारी चेतना और नारी शोषण दोनों का यथार्थ अंकन किया है। बावजूद आज भी अंचल का नारी जीवन पूर्णतः उजागर नहीं हो सका है। 'कब तक पुकारूँ' में रांगेय राघव ने करनट नारी की चेतना को जिस बारीकी से आँका है, कगार की आग में हिमांशु जोशी ने गोमती के द्वारा जिस जीवट पहाड़ी नारी को प्रस्तुत किया है, पंकज विश्ट ने 'उस चिड़िया का नाम' में लोकतत्त्व द्वारा पहाड़ी नारी की व्यथा को जिस प्रकार उजागर किया है या मणि मधुकर ने पिंजरे में पन्ना में पन्ना और रम्या में जिस चेतना को पिरोया है उसका अभी तक पूर्ण विकास नहीं हो पाया है। नारी विमर्श के इस दौर में ग्रामीण, पहाड़ी, जनजातीय, आंचलिक नारी आज भी उपेक्षित है। वह हाशिए पर ही है। महज कृष्णा अग्निहोत्री, मैत्रेयी पुष्पा जैसी चंद महिला लेखिकाओं को छोड़ इस नारी की व्यथा को समेटने वाली महिला लेखिकाओं का पूर्णतः अभाव है। अधिकतर महिला लेखिकाएँ मध्यवर्ग और उच्च मध्यवर्ग की होने से ग्रामीण आंचलिक नारी के बुनियादी सवालों पर न वे

141 मैत्रेयी पुष्पा, अल्मा कबूतरी, राजकमल प्रकाशन, नई दिल्ली, 2000 पृ० 132

लिख रही हैं न लिख सकती हैं। रोटी की चिंता से ग्रस्त संघर्षमय जीवन जीने वाली नारी कहाँ उभर रही है? वहाँ मनोविज्ञान, सेक्स या प्रेम त्रिकोण जैसी समस्याएँ कोई माने नहीं रखती है। उसका जीवन भूख के लिए संघर्षरत है अस्मिता दूर की बात है। बावजूद इस नारी के पास अपना जीवन दर्शन है जो किसी वाद या संगठन से आरोपित नहीं है। परिवेश ने उसे बहाल किए अनौपचारिक संस्कार और प्रकृति ने दी हुई दुर्दम्य जिजीविषा उसकी अनूठी शक्ति है। बाह्य शक्तियाँ मात्र उसका चौतरफा दोहन कर रही है। नारी लेखन इसके प्रति चुप्पी लगाए बैठा है। समग्रतः उत्तरशती के उत्तरार्ध में नारी विमर्श ने कई मात्रा में आश्वस्त किया है बावजूद वह संतोषप्रद नहीं है। भारतीय आम नारी की व्यथाएँ अभी पूर्णतः उजागर नहीं हो पाई हैं। लीक से हटकर नए प्रयोग हो रहे हैं फिर भी इस लेखन ने संपूर्ण दृष्टि पाई है ऐसा नहीं कहा जा सकता। अभी भी इसका एक व्यापक क्षेत्र अछूता और उपेक्षित है। पूर्वलेखन से आज नारी विमर्श में अपेक्षातीत विस्तार हुआ है। चिंतन के नए स्वर उभर रहे हैं। नारी के प्रति देखने की दृष्टि में भी परिवर्तन हुआ है। इस लेखन में संख्यात्मक ही नहीं तो गुणात्मक वृद्धि भी पाई जाती है। फिर भी वर्जित क्षेत्रों की अनेक अभिशप्त कहानियाँ अंधेरे में हैं और उन्हें उजागर किए बिना समग्र नारी विमर्श का दावा एकांगी होगा।

3.3. निम्नवर्ग और निम्नवर्गीय मनोवृत्ति

मैत्रेयी जी के यहाँ निम्न वर्ग, मध्य वर्ग, कुलीन वर्ग, तीनों वर्ग की स्त्रियाँ संघर्ष करती दिखाई देती है। यह सत्य भी हे कि स्त्री चाहे किसी भी जाति, किसी भी धर्म या किसी भी वर्ग की क्यों न हो किन्तु अधिकांश पक्षों में उसका संघर्ष समान धर्म रहा है। शारीरिक उत्पीड़न, मानसिक यातना, पितृात्मक सत्ता का शिकार, धन एवं सम्पत्ति का अधिकार, मुक्ति की आकांक्षा, समाज की रूढ़िगत पंरपरायें इत्यादि।

उपन्यासकार ने जहाँ एक ओर निम्न वर्ग का प्रतिनिधित्व करने वाली कदमबाई जैसे चरित्र को रखा है, जो अपनी नियति को स्वीकार करते हुए निम्न जीवन व्यतीत करती है, तो दूसरी ओर अल्मा कबूतरी जैसे चरित्र को भी दिखाया है। अल्मा को स्त्री होने के कारण और वह भी कबूतरी होने के कारण पुरूष सत्ता के अनेक पाश्विक अत्याचार सहने पड़ते हैं। बार–बार पुरूष सत्ता के हाथों अपना

शरीर नुचवाते–नुचवाते उसमें अत्याचारी के विरूद्ध लड़ने का जज्बा ही खत्म हो जाता है, फिर भी वह मौके की तलाश में रहती है और जिन्दगी का मोह नहीं छोड़ती। अल्मा के संघर्ष की एक बड़ी विशेषता है जीवन के प्रति अदम्य जिजीविषा इसीलिए वह जीवन से कभी निराश नहीं होती। बार–बार अस्मिता कुचले जाने पर भी वह आत्महत्या जैसी कायरता के लिए तैयार नहीं होती। वह स्वयं से कहती है: ''मेरी भीतर आस का एक नन्हा से पंछी फड़फड़ाया करता है। कितनी बार पंख कटे, कितनी बार घायल हुआ, वह मरता नहीं। फिर–फिर फड़फड़ाता है और उड़ने की कोशिश करता है, ऊँचे से ऊँचा उड़ने की। वह डरता भी नहीं।''[142]

अल्मा का संघर्ष वैयक्तित्व न होकर कबूतरा समाज की प्रतिनिधि चरित्र का संघर्ष है, जो अपने समाज की उन्नति के के लिए कृत संकल्प है। इसीलिए अल्मा का संघर्ष एक स्त्री का संघर्ष होकर भी पूरे कबूतरा समाज का संघर्ष बन जाता है, जो समाज की मुख्यधारा में शामिल होने के लिए सदियों से इंतजार कर रहे हैं।

कदमबाई, भूरीबाई एवं अल्मा कबूतरी जैसे स्त्री चरित्र को दिखाकर मैत्रेयी जी यह कहना चाहती हैं कि अब निम्न वर्ग की स्त्रियों में भी जागृति आ रही है, वह भी अपने अधिकारों के लिए लड़ने लगीं हैं, अत्याचार के विरूद्ध आवाज उठाने लगी हैं, वे चाहती हैं कि उन्हें निम्न वर्ग में न रहने दिया जाये, वरन् उनका स्तर उच्च बनाने हेतु प्रयत्न किये जायें ताकि समाज उन्हें हेय दृष्टि से न देखे, उन्हें भी समाज में समान अधिकार प्राप्त है। निम्न वर्ग को जागरूक करने में 'इदन्नमम' की मन्दा अत्यन्त महत्वपूर्ण भूमिका निभाती है।

(ख) भारतीय ग्रामीण समाज में नारी की स्थिति

मैत्रेयी पुष्पा के कहानियों में आर्थिक संघर्ष का भी विवेचन किया गया है। स्वतंत्रता प्राप्ति के पश्चात् भारतीय समाज में मानवीय मूल्यों का विघटन बहुत तीव्र गति से हुआ। समाज में धन, संपत्ति का महत्व बढ़ता गया। भौतिक सुखों को किसी भी कीमत पर खरीदने के लिए मनुष्य मानवीय मूल्यों की उपेक्षा करने लगा। यहीं से उसका पतन प्रारंभ हुआ। इसी क्रम में उपभोक्तावादी संस्कृति का उदय हुआ। आर्थिक दबाव और विषमता का प्रभाव स्त्री पर अधिकाधिक होता गया।

---

142 मैत्रेयी पुष्पा, अल्मा कबूतरी, राजकमल प्रकाशन, नई दिल्ली, 2000 पृ० 132

उसके कार्य क्षेत्र एवं जीवन यापन की पद्धति में फर्क आया जिसका परिणाम जीवन के हर क्षेत्र में दिखाई देता है। खास तौर पर ग्रामीण क्षेत्र की स्त्री का आर्थिक विषमता के कारण अधिकाधिक शोषण होता गया है। अशिक्षित, विधवा तथा वृद्ध स्त्री अपने परिवार पर आर्थिक विपन्नता के कारण अधिक आश्रित रही है। इसलिए उसका शोषण भी अधिकाधिक होता गया है। मैत्रेयी जी की कहानियों में आर्थिक समस्या का चित्रण किया गया है–

3.1 प्रेम व दाम्पत्य जीवन

परिवारेतर सम्बन्धों में मैत्री सम्बन्ध बहुत ही महत्त्वपूर्ण है। यह एक ऐसा सम्बन्ध है, जिसके सहारे मनुष्य अपने को समाज में सहजता प्रदान करता है। यह सम्बन्ध तभी बनता है, जब मनुष्य अपने घर से बाहर सामाजिक गतिविधियों में भाग लेता है। जब दो अनजान व्यक्ति आपस में मिलते हैं और धीरे–धीरे बातचीत के माध्यम से आपसी सामंजस्य स्थापित करते हैं, तो उन दोनों में मैत्री सम्बन्ध का बीज रोपित हो जाता है, लेकिन यह बीज फलता तभी है, जब दोनों एक–दूसरे के प्रति निःस्वार्थ भाव रखते हों। मैत्री सम्बन्ध ज्यादातर हम उम्र व्यक्तियों के बीच ही स्थापित होता है, क्योंकि इस सम्बन्ध के लिए आपसी तालमेल और विचारों का एक होना बहुत आवश्यक है। इस सम्बन्ध के आधार पर ही मनुष्य सामाजिक कार्यों को सहजता से पूरा करता है। सुषमा चौधरी ने मित्रता को परिभाषित करते हुए कहा, ''मित्रता एक ऐसा पवित्र बन्धन है कि जिससे समाज की हर गली और अधिक विस्तृत, पावन और स्पष्ट हो जाती है। मित्रता के आधार पर ही समाज का विस्तार होता है।''[143] अतः स्पष्ट होता है कि मैत्री सम्बन्ध के कारण समाज उन्नति की ओर अग्रसर होता है। यदि यह सम्बन्ध न होता तो न तो मनुष्य अपने को सुरक्षित महसूस करता और न ही समाज। यह सम्बन्ध प्राचीन काल से चला आ रहा है और वर्तमान में भी यह मनुष्य और समाज को अपनी आवश्यकता महसूस करवाता है, लेकिन वर्तमान में कुछ कपटी और लालची मनुष्य इस सम्बन्ध को कलंकित कर रहे हैं। कुछ स्वार्थी लोग मित्रता की आड़ में अपना उल्लू सीधा करते हैं और अपने मित्र की पीठ में छुरा घोंपने से भी नहीं हिचकिचाते। सच्चा मैत्री सम्बन्ध वही है, जो अपने मित्रों के प्रति अपने कर्त्तव्यों का पालन पूरी निष्ठा से करता है। मैत्रेयी पुष्पा ने इस सम्बन्ध को समाज के लिए आवश्यक माना है, तभी तो उन्होंने अपने उपन्यासों में इस सम्बन्ध को चित्रित किया है।

'इदन्नमम' उपन्यास में मन्दा–सुगना के माध्यम से मैत्री सम्बन्ध को चित्रित किया गया है। ये दोनों बचपन की सहेलियाँ हैं। जब बऊ अपनी पोती मन्दा को लेकर श्यामली चली आती है, तो दोनों एक–दूसरे से दूर हो जाती हैं। जब ये वापिस अपने गाँव आते हैं, तो दोनों बड़ी हो गई होती है, लेकिन एक–दूसरे को देखकर पहचान जाती हैं। सुगना, मन्दा के पास जाकर उसके कामों में उसकी मदद करती है। दोनों आपस में हँसी–ठिठोली भी करती हैं। मन्दा अपनी भाभी कुसुमा से सुगना के बारे में बताती हुई कहती है, ''भाभी, क्रैशर पर जाने के कारण हम रामायण नहीं पढ़ पाते। लोग जुड़ते हैं, तो सुगना सुना देती है पढ़के। सुगना को नहीं जानती होगी तुम। जगेसर कक्का की बेटी है। है, तो हमसे छोटी, पर सखी–सहेली है हमारी।''[144] इससे स्पष्ट होता है कि मन्दा और सुगना अन्तरंग सुख–दुःख को आपस में बांटने वाली पक्की सहेलियाँ हैं। मन्दा अपनी सहेली की हर सम्भव मदद करती है। जब सुगना, अभिलाख सिंह को मारकर अपने को जला

143 सुषमा चौधरी, स्वातंत्र्योत्तर हिन्दी उपन्यासों में पौराणिक सन्दर्भ (नई दिल्ली : स्वराज प्रकाशन, 2009), पृ. 174–175

144 मैत्रेयी पुष्पा, इदन्नमम (नयी दिल्ली : राजकमल प्रकाशन, 1999), पृ. 286

देती है, तब मन्दा उसको लेकर अस्पताल जाती है, ताकि वो बच जाए। मन्दा अपनी सहेली सुगना को बचाने के लिए हर सम्भव कोशिश करती है, लेकिन उसकी मृत्यु हो जाती है। इस तरह दोनों अपनी दोस्ती निभाती हैं।

'अल्मा कबूतरी' उपन्यास में भी मैत्री सम्बन्ध को चित्रित किया गया है। यहाँ पर राणा की मित्रता करन और अल्मा से है। राणा भी करन को देखकर पढ़ना चाहता है, लेकिन उसकी माँ कदमबाई राणा की पढ़ाई की लगन देखकर चिन्तित हो जाती है। करन, कज्जा जाति का है और राणा कबूतरा जाति का। कदमबाई सोचती है कि ये पढ़ाई–लिखाई हमारी जाति वालों को नहीं सोहाती है। वह कहती है, ''करन तेरा यार है, पर मंसाराम की औरत तूने देखी है? अपने आदमी को लेकर हमसे खुन्नस मानती है।''[145] कदमबाई के शब्दों से स्पष्ट हो जाता है कि राणा और करन के बीच मित्रता है, लेकिन इन दोनों की मित्रता फलीभूत नहीं हो पाती है। दोनों परिवारों की कड़वाहट इनकी मित्रता के बीच दीवार पैदा कर देती है। दूसरी ओर अल्मा है। कदमबाई अपने बेटे राणा को रामसिंह के पास पढ़ाई करने भेज देती है। रामसिंह की बेटी अल्मा से राणा की मित्रता हो जाती है। अल्मा राणा को दुखी देखकर उसका मन बहलाने की कोशिश करती। वह उसके साथ खेल खेलती और जानबूझ कर उसे जिताने के लिए हार जाती, ताकि वह खुश हो जाए। राणा यह सब देखकर अपनी तौहीन समझता, लेकिन फिर सोचने लगता ''नहीं, बुरा क्या लगना? उसने अपने आपको संभाला। हो सकता है अल्मा दोस्ती का हाथ बढ़ा रही हो।''[146] इससे स्पष्ट होता है कि राणा और अल्मा के बीच मित्रता है। दोनों एक–दूसरे की भावनाओं को समझते हैं। सच्चा मित्र वही होता है, जो अपने साथी के दुःख अनुभव करे और उसे दूर करने में उसकी सहायता करे। अल्मा अपनी मित्रता को निभाते हुए राणा को हर सम्भव खुशी देना चाहती है। राणा भी अल्मा को समझता है। उनकी यही भावना दोनों में मैत्री सम्बन्ध बनाती है।

'बेतवा बहती रही' उपन्यास में मीरा–उर्वशी के बीच मैत्री सम्बन्ध को चित्रित किया गया है। ये दोनों बचपन की साथी हैं। उर्वशी तो यहीं जन्मी, लेकिन मीरा अपनी माँ की मृत्यु के बाद अपने ननिहाल में आई। यहीं इनकी मित्रता हुई। इन

---

145 मैत्रेयी पुष्पा, अल्मा कबूतरी (नयी दिल्ली : राजकमल प्रकाशन, 2000), पृ. 54

146 मैत्रेयी पुष्पा, अल्मा कबूतरी (नयी दिल्ली : राजकमल प्रकाशन, 2000), पृ. 125

दोनों के घर के बीच एक दीवार का फांसला है। इन दोनों की मित्रता को चित्रित करते हुए कहा है, ''अजीत की छोटी बहन थी वह, उसकी अभिन्न सखी। एक साथ घर–घर खेली थीं दोनों, गुड़ियों का ब्याह रचाया था। आपस की अन्तरंग बातें एक–दूसरे के कान में फुसफुसायी थीं। साथ–साथ डोलतीं, बतियातीं और खिल–खिल हँसती–सरसों के फूलों की तरह।''[147] यहाँ स्पष्ट होता है कि दोनों की आपस में गहरी मित्रता थी। दोनों एक–दूसरे के सुख–दुःख की भागीदार थीं। लेकिन भाग्य की विडम्बना कहें या कुछ और कि इन दोनों की दोस्ती पर ग्रहण लग जाता है। उर्वशी की शादी के कुछ समय बाद वह विधवा हो जाती है और उसका भाई जबरदस्ती उसकी दूसरी शादी मीरा के पिता बरज़ोर से करवा देता है। मीरा यह देखकर हतप्रभ हो जाती है। वह कहती है, ''उर्वशी, तुम्हें विधवा देखा तो कष्ट सहने की क्षमता थी। पर आज...आज।''[148] स्पष्ट होता है कि मीरा उर्वशी को विधवा रूप में देखकर व्यथित तो होती है, लेकिन उसे अपने पिता की पत्नी के रूप में देखकर छटपटा उठती है। वह उर्वशी की ऐसी दशा देखकर दुःख से भर जाती है और अपनी सहेली के दुःख में स्वयं भी दुखी हो जाती है। मैत्रेयी पुष्पा स्पष्ट करना चाहती हैं कि जब बचपन की सहेलियाँ बड़ी होकर माँ–बेटी के रिश्ते में बाँध दी जाती हैं, तो इससे निन्दनीय बात और क्या हो सकती है?

'त्रिया–हठ' उपन्यास में भी मैत्री सम्बन्ध का चित्रण हुआ है। यहाँ पर मीरा अपनी सहेली उर्वशी को याद करके कहती है, ''उर्वशी अपनी भूमिका में मेरी सहेली, संरक्षक और सेविका के रूप में उतरी। मैं रोती, वह चुपाती, जबकि उम्र में मुझसे बड़ी नहीं थी। मैं खाती, वह खिलाती। भूख उसे नहीं लगती होगी, कैसे संभव है?''[149] मीरा के ये शब्द स्पष्ट करते हैं कि इन दोनों के बीच मैत्री सम्बन्ध हैं। उर्वशी मीरा की सहेली होने के साथ–साथ उसकी रक्षक और सेविका भी थी। वह मीरा से अधिक धैर्यवान और जिम्मेदार थी। यहाँ पर एक बात यह भी स्पष्ट होती है कि दोनों हमउम्र थीं, फिर भी उर्वशी और मीरा में बहुत अन्तर था। इसका कारण है दोनों के परिवेश में अन्तर होना। उर्वशी गरीबी में पली–बड़ी थी, जिसके

---

147 मैत्रेयी पुष्पा, बेतवा बहती रही (नयी दिल्ली : किताबघर प्रकाशन, 2010), पृ. 13
148 मैत्रेयी पुष्पा, बेतवा बहती रही (नयी दिल्ली : किताबघर प्रकाशन, 2010), पृ. 123
149 मैत्रेयी पुष्पा, त्रिया–हठ (नयी दिल्ली : किताबघर प्रकाशन, 2010), पृ. 20

कारण उसमें संतोष, धैर्य, जिम्मेदारी आदि गुण स्वाभाविक रूप से आ गए। दूसरी ओर मीरा अपनी नानी के सम्पन्न घर में पली थी। अतः स्पष्ट होता है कि दोनों में मित्रता थी, लेकिन दोनों के परिवारों, परिवेश व परिस्थितियों में भिन्नता थी।

दूसरी ओर देवेश–स्मिता के बीच मैत्री सम्बन्ध चित्रित हुआ है। स्मिता, देवेश को अपने साथ चन्दनपुर ले जाने की बात करती है, तो देवेश हंसकर कहता है कि तुम वहाँ पर मेरा क्या परिचय दोगी? तो मीरा कहती है, ''परिचय? कैसा परिचय? रिश्ता, क्या रिश्ता? तुम लड़कों में यही बात बुरी है, डरते बहुत हो, मगर करना सब कुछ चाहते हो। मेरे दादा गजराज सिंह और मेरी दादी तक जानते हैं कि एक देवेश है, जो मेरा दोस्त है। वे समझ गए हैं कि जो लड़कियाँ पढ़ती–लिखती हैं, दोस्ती भी करती हैं। लड़कियों से भी लड़कों से भी। यह बात और किसी ने नहीं, उन्हें मैंने समझाई है, क्योंकि उन्हें पता है, उनकी स्मिता चोरी–छिपे कोई काम नहीं करती, न करेगी।''[150] यहाँ स्पष्ट होता है कि देवेश–स्मिता के बीच मैत्री सम्बन्ध हैं। यहाँ पर देवेश ने जो सवाल उठाया है, हमारे समाज में भी वही सवाल उठता है। एक लड़के–लड़की की मित्रता को शक की नज़र से देखा जाता है। यहाँ पर मैत्रेयी पुष्पा यह स्पष्ट करना चाहती हैं कि मित्रता किसी के साथ भी हो सकती है। जब तक दोनों के बीच ईमानदारी है, तब तक कोई गलत बात नहीं होती है। वर्तमान समय में लड़के–लड़कियाँ साथ पढ़ते हैं, काम करते हैं, यदि उनके बीच मित्रता हो जाए, तो इसमें गलत क्या है? हाँ घरवालों को ये बात पता होनी चाहिए। दुनिया वाले तो बहुत कुछ कहते हैं, अफवाहें उड़ाते हैं। उन सबके मुँह तो बन्द नहीं किए जा सकते, लेकिन परिवार वालों को आपके बारे में पता हो, तो कोई डरने की बात नहीं।

'कही ईसुरी फाग' में ईसुरी धीरे पंडा के बीच मैत्री सम्बन्ध चित्रित हुआ है। जब ईसुरी, रजऊ के प्रेम बन्धन में फंस जाता है तब उसका मन फागें गाने में नहीं लगता है। धीरे पंडा उसे समझाता है कि तुम अपना ध्यान फागों में लगाओ तो ईसुरी कहता है कि रजऊ के बिना फाग में मन नहीं लगता। यह सुनकर धीरे पंडा अचम्भे में पड़ जाता है। ''धीरे पंडा सकते में आ गए, तो ईसुरी ने अब तक जो

---

150 मैत्रेयी पुष्पा, त्रिया–हठ (नयी दिल्ली : किताबघर प्रकाशन, 2010), पृ. 105

कुछ सोचा था, सब बता दिया। मित्र का कर्त्तव्य है, मित्र को समझाना। धीरे पंडा ने मित्र धर्म निभाया।''[151] स्पष्ट होता है कि दोनों के बीच मैत्री सम्बन्ध हैं। धीरे पंडा एक सच्चे दोस्त की तरह अपना फर्ज़ निभाते हैं और ईसुरी को सही राह पर चलने का परामर्श देते हैं।

'गुनाह–बेगुनाह' उपन्यास में इला–समीना के बीच मैत्री सम्बन्ध हैं। ईला अपने ही पुलिस–विभाग के अत्याचारों और भ्रष्टाचार से परेशान रहते लगती है। जयन्त, समीना को बताता है कि इला नार्मल नहीं लग रही है। समीना अपनी सहेली ईला को फोन करती है और समझाती है। वह कहती है, ''तू सुन तो रही है न इला, मैं क्या कह रही हूँ? होश में आ। अपनी ड्यूटी में ध्यान लगा।''[152] यह सुनकर इला मन में सोचती है, ''समीना को कैसे समझाऊँ मैं कि 'ड्यूटी' शब्द मेरे लिए खोखला हो गया। जब नाइनसाफी का जलजला चारों ओर से बढ़ता आए और रास्ते बाँध लें, तब कौन सी ड्यूटी करें हम?''[153] इससे स्पष्ट होता है कि इला न्याय व्यवस्था खत्म होते देखकर परेशान है। इला एक ईमानदार पुलिसकर्मी है, लेकिन अपने ही विभाग में अन्याय देखकर दुखी हो जाती है। समीना अपनी दोस्ती को निभाते हुए उसे समझाने का प्रयास करती है।

अतः कहा जा सकता है कि मैत्रेयी पुष्पा ने अपने उपन्यासों में मैत्री सम्बन्ध का चित्रण किया है। इसके माध्यम से उन्होंने पाठक वर्ग को मैत्री सम्बन्ध की पवित्रता और पावनता से परिचित करवाया है। यदि मनुष्य इस सम्बन्ध को ईमानदारी से निभाए, तो समाज उन्नति की ओर अग्रसर होगा, ऐसा लेखिका भी मानती हैं और हम भी लेखिका के इस मत से पूर्ण–रूपेण सहमत हैं।

3.2 अनमेल विवाह एवं बाल विवाह

भारतीय समाज में फैली बहुत सी वैवाहिक समस्याएँ लेखिका ने अपने उपन्यासों के माध्यम से हमारे सामने लाने का प्रयास किया है। इनके अन्तर्गत अनमेल विवाह, विधवा विवाह, बाल विवाह, प्रेम विवाह आदि प्रमुख हैं। मैत्रेयी पुष्पा ने इनका यथार्थ चित्रण अपने उपन्यासों में किया है। उन्होंने अपने उपन्यासों के

151 मैत्रेयी पुष्पा, कही ईसुरी फाग (नयी दिल्ली : राजकमल प्रकाशन, 2004), पृ. 32
152 मैत्रेयी पुष्पा, गुनाह–बेगुनाह (नयी दिल्ली : राजकमल प्रकाशन, 2011), पृ. 182
153 मैत्रेयी पुष्पा, गुनाह–बेगुनाह (नयी दिल्ली : राजकमल प्रकाशन, 2011), पृ. 183

माध्यम से अनमेल विवाह के दुष्परिणामों, विधवा–विवाह के माध्यम से एक विधवा को अपने लालच के लिए ज़बरदस्ती दूसरे विवाह के लिए मज़बूर करना व प्रेम विवाह के बाद उत्पन्न होने वाली समस्याओं का यथार्थ व मार्मिक चित्रण किया है।

'स्मृति दंश' उपन्यास में अनमेल विवाह की समस्या को चित्रित किया गया है। इसमें भुवन व विजय सिंह के माध्यम से अनमेल विवाह का चित्रण हुआ है, क्योंकि विजय सिंह एक पागल व्यक्ति है। भुवन पत्नी का पूरा फर्ज़ निभाती है, लेकिन उसे पति का सुख नहीं मिलता है।

'बेतवा बहती रही' उपन्यास में भी अनमेल विवाह की समस्या को उठाया गया है। इसमें उर्वशी के विधवा होने पर उसका भाई अजीत जब़ रदस्ती उसकी दूसरी शादी करवा देता है। उर्वशी का दूसरा पति उसी की सहेली मीरा का पिता बरज़ोर सिंह है। उर्वशी और बरज़ोर सिंह के बीच मधुरता नहीं आ पाती है, क्योंकि वह माँ–बेटे के रिश्ते को शक की निगाह से देखता है। वह सोचता है कि उर्वशी और उसके बेटे उदय के बीच कुछ चल रहा है। यही कारण है कि उदय जब अपने पिता की पसन्द की लड़की से विवाह करने से मना कर देता है, तो वह उदय को कहता है, ''तौ जा समझ लियो उदय, हमारे घर में रह नहीं सकत तुम। सींग समाय तहाँ जाओ जा भट्टी द्वोत को? काहे से कि अब जे ही है तुम्हारी खासमखास।''[154] इससे स्पष्ट होता है कि अनमेल विवाह के कारण ही बरज़ोर सिंह के मन में ये सब विचार आते हैं। वह स्वयं तो उर्वशी के पिता की उम्र का है और बेटा व उर्वशी हमउम्र हैं। यहाँ पर मैत्रेयी पुष्पा ने अनमेल विवाह के कारण वैवाहिक जीवन में आने वाली समस्याओं के प्रति पाठक वर्ग को सचेत किया है।

'झूला नट' उपन्यास में लेखिका ने वैवाहिक समस्या के उस पहलू को लेकर विचार किया है, जिसमें माता–पिता द्वारा बचपन में ही रिश्ता तय कर दिया जाता है। इसमें सुमेर व शीलो का विवाह बचपन में ही उसके स्वर्गवासी पिता द्वारा तय कर दिया गया था। जब दोनों की शादी होती है, तो सुमेर उसे अपनाता नहीं है, क्योंकि वह उसे अपने योग्य नहीं मानता है और उसने शहर में शादी भी कर ली थी। वह अपनी माँ से उसके सम्बन्ध में कहता है, ''ठंडे दिमाग से सोचो, तुम्हारी छः

---

154 मैत्रेयी पुष्पा, बेतवा बहती रही (नयी दिल्ली : किताबघर प्रकाशन, 2010), पृ. 142

उँगलियों वाली कल्लू बहू मेरे दोस्त को रोटी परोसने ही आ जाती, तो वह कल के दिन मुझे बोलने न देता। काले गोरे दो रंग...पर तुम्हारी बहू तो नीली है, बैंगनी।''[155] स्पष्ट होता है कि सुमेर की शादी उसकी इच्छा के बिना स्वर्गवासी पिता के वचन को पूरा करने के कारण हुई है। लेखिका पाठक वर्ग को यह संदेश देना चाहती है कि माता–पिता को पुरानी रूढ़िवादी परम्पराओं को त्यागकर अपने बच्चों की पसंद नापसन्द को मद्देनज़र रखते हुए ही शादी करनी चाहिए, ताकि आगे चलकर दोनों को कोई शिकायत न हो।

'अगनपाखी' उपन्यास में भी अनमेल विवाह की समस्या को चित्रित किया गया है। भुवन की शादी एक पागल व्यक्ति से कर दी जाती है। वह शादी के बाद इस बात का विरोध अपनी अम्मा से करती है, लेकिन वह उसे समझाकर इस रिश्ते को निभाने के लिए कहती है। वह अपनी आन्तरिक पीड़ा को चन्दर से व्यक्त करती हुई कहती है, ''मैं अपना हाथ रस्से से उनके पलंग से बांध लेती। उनका पाँव अपने पाँव के साथ रस्से से जोड़ लेती। रात में उठें तो जान लूँ। भागें तो रोक लूँ। कभी मन में यह भी आता कि इस पागल को खुल जाने दूँ। मरता है तो मर जाने दूँ, किस्सा खत्म।''[156] स्पष्ट होता है कि भुवन के लिए यह रिश्ता मात्र बोझ है। लेखिका पाठक वर्ग को सचेत करती है कि हमारे समाज में बहुत सी ऐसी लड़कियाँ हैं, जो भुवन की तरह अनमेल विवाह को सही नहीं मानती हैं और सही भी है, तो ज़बरदस्ती का रिश्ता अधिक समय तक टिक नहीं सकता है।

'विज़न' उपन्यास में भी अनमेल विवाह का चित्रण हुआ है। इसमें डॉ. नेहा और डॉ. आभा अनमेल विवाह का शिकार होती हैं। इसमें लेखिका ने वैवाहिक समस्या का एक मुख्य कारण माना है–बराबरी में रिश्ता नहीं होना अर्थात् रिश्ता हमेशा समान दर्जे में होना चाहिए। डॉ. नेहा मध्यवर्गीय परिवार से है और उसकी शादी उच्च्य वर्ग के परिवार में होती है, जिसके कारण वह अपने ससुराल वालों के साथ सामंजस्य स्थापित नहीं कर पाती है। डॉ. आभा उच्चवर्ग में पली–बड़ी है और उसकी शादी मध्यवर्गीय परिवार में होती है। वह खुले विचारों वाली और अपने कैरियर को महत्त्व देने वाली लड़की है। डॉ. मुकुल और उसके परिवार वालों की

---

155 मैत्रेयी पुष्पा, झूला नट (नयी दिल्ली : राजकमल प्रकाशन, 1999), पृ. 37

156 मैत्रेयी पुष्पा, अगनपाखी (नयी दिल्ली : वाणी प्रकाशन, 2001), पृ. 105

सोच और डॉ. आभा के विचारों में बहुत अन्तर है। उनका मानना है कि वह एक अच्छी पत्नी, बहू बनकर रहे। घर के सारे काम संभाले और वह स्वयं क्या चाहती है इस पर कोई विचार नहीं करता। ऐसा नहीं है कि आभा वहाँ कोई समझौता नहीं करती है, लेकिन डॉ. मुकुल सन्तुष्ट नहीं होता। वह उसके साथ मारपीट करता है।

यह सब देखकर आभा पूरी तरह टूट जाती है। वह तलाक लेने का फैंसला करती है। वह मायके आ जाती है और अपने पति को चिट्ठी लिखती है। ''मुकुल आई वांट डायवोर्स। आई वांट डायवोर्स। आई वांट डायवोर्स...मैं तलाक चाहती हूँ। तलाक चाहती हूँ...क्योंकि कोई कितना ही प्यारा क्यों न हो, अगर धोखा देता है तो.. . कोई कितना ही अपना क्यों न हो, अगर यंत्रणा देता है तो...मुकुल, किसी को हक नहीं कि दूसरे को ऐसा सदमा दे कि उसका संतुलन बिगड़ने लगे।''[157] स्पष्ट होता है कि डॉ. आभा किसी मोह में न घिरकर तलाक लेना ही उचित समझती हैं। यहाँ पर अनमेल विवाह का कारण माना गया है– दो परिवारों में असमानता। डॉ. नेहा अपने ससुराल में रहकर अपना मानसिक संतुलन खो बैठती है, तो डॉ. आभा इन सब बन्धनों को तोड़कर तलाक ले लेती है।

'कस्तूरी कुण्डल बसै' में भी अनमेल विवाह का चित्रण हुआ है। इसमें कस्तूरी की शादी एक अधेड़ उम्र के व्यक्ति से कर दी जाती है। जिसका परिणाम यह होता है कि जब उनकी बच्ची मात्र अठारह महीने की होती है, तो उसके पति हीरालाल की जीवन लीला समाप्त हो जाती है। बूढ़े अपाहिज ससुर और बेटी की जिम्मेदारी उस अकेली कस्तूरी पर आ जाती है। स्पष्ट होता है कि कस्तूरी उम्र में छोटी थी और हीरालाल उससे बहुत बड़ा था, जिसके कारण पति–पत्नी का साथ एक–दूसरे से थोड़े समय बाद ही छूट जाता है।

'फ़रिश्ते निकले' उपन्यास में सब्बी बीबी नामक पात्रा के माध्यम से अनमेल ब्याह का चित्रण हुआ है। बेला सोचती है कि सब्बी बीबी की शादी उसके सामने हुई थी। उसका पति उससे बहुत बड़ा था। बेला की माँ ने बताया कि दूल्हा बिन्नू के पिता के साथ छठी कक्षा तक पढ़ा था। बेला का मानना है कि सब्बी बीबी शादी का अर्थ भी नहीं जानती थी और न ही उसे पता था। वह कहती है, ''बाद में हम

157 मैत्रेयी पुष्पा, विजन् (नयी दिल्ली : वाणी प्रकाशन, 2002), पृ. 119

दोनों अलग–अलग रोए। मैं गाय–बछड़ों की उदास आँखों से जुड़कर और वह गाँव के सीवान से बिछुड़ते ही दहाड़े मार–मार कर रोने लगी। इधर मेरी माँ चली आई और मेरी बुआ (सब्बी की माँ) से लड़ने लगी। मुझे उस झगड़े में पता चला कि बीबी का ब्याह नहीं, अनमेल ब्याह हुआ है। सब्बी बीबी को अभी भी पता नहीं था कि उसके जैसे ब्याह को क्या कहते हैं।''[158] स्पष्ट होता है कि जब सब्बी बीबी की शादी हुई, तब उसे शादी का अर्थ भी पता नहीं था। इसके माध्यम से लेखिका ने अनमेल विवाह की समस्या को उठाया है।

अतः कहा जा सकता है कि मैत्रेयी पुष्पा ने अपने उपन्यासों में वैवाहिक समस्याओं का यथार्थ चित्रण किया है। इनके अन्तर्गत अनमेल विवाह, दो परिवारों में समानता न होना, गरीबी, दहेज़ आदि कारणों की चर्चा की है, जिनके कारण वैवाहिक समस्याएँ उत्पन्न होती हैं।

3.3 विधवा समस्या

प्रेमचन्द जी ने साहित्य में नारी को केंद्र में रखकर उसकी समस्याओं, परिस्थितियों और उसके जीवन से जुड़े पहलुओं को अपने उपन्यास के माध्यम से पाठकों तक पहुँचाया है। लेखन एक ऐसी कला है जिसके माध्यम से हम समाज को सच का आईना दिखा सकते हैं। प्रेमचन्द जी का लेखन, हिन्दी साहित्य की एक ऐसी विरासत है, जिसके बिना हिन्दी के विकास का अध्ययन अधूरा है।

मानव समाज के विविध पक्षों पर प्रकाश डालने के निमित्त पुरुष पात्र की अपेक्षा नारी पात्र का माध्यम अधिक उपयुक्त ठहरता है, क्योंकि मानव समाज के मूल में नारी विद्यमान है। नारी से समाज सृष्टि, प्रेरणा, शक्ति, तुष्टि, प्रेम आदि सब कुछ पाता है। उसके विकास का इतिहास मानव सभ्यता एवं संस्कृति का इतिहास है। मानव समाज के बदलने वाले सामाजिक मूल्यों को आंकने के जितने भी साधन हैं नारी उन सबमें प्रधान है। इसलिए हिन्दी साहित्य में नारी जीवन के विविध रूप अंकित हुए। स्वातंत्र्योतर कालखंड के हिन्दी उपन्यासों में नारी अस्तित्व के सूक्ष्म मूल्य बोधों, भावबोधों और आधुनिक चेतना को व्यक्तिगत एवं सामाजिक धरातल पर सशक्त अभिव्यक्ति प्रदान की गई है।

---

158 मैत्रेयी पुष्पा, फ़रिश्ते निकले (नयी दिल्ली : राजकमल प्रकाशन, 2016), पृ० 37

'बेतवा बहती रहे' मैत्रेयी पुष्पा का दूसरा उपन्यास है। कथानक की दृष्टि से यह एक छोटा उपन्यास है। यह एक नायिका प्रधान उपन्यास है। इसकी सम्पूर्ण कथा उर्वशी नामक सुन्दर युवती के इर्द–गिर्द घूमती है। इसमें उर्वशी पुरुष प्रधान समाज में अपने अधिकारों के लिए संघर्ष करते हुए नज़र आती है। उर्वशी का जन्म एक गरीब परिवार में हुआ है। वह कम पढ़ी–लिखी है। उसकी शादी शिक्षित सर्वदमन से होती है। वह नए विचारों का लड़का है। वह उसे जीवन की हर खुशी देना चाहता है, लेकिन उसकी मृत्यु हो जाती है। उर्वशी बहुत कम उम्र में विधवा हो जाती है। उसका भाई अजीत दस बीघा जमीन के लालच में उसकी दूसरी शादी उसी की सहेली मीरा के पिता बरजोर सिंह के साथ कर देता है। वह एक धैर्यवान एवं सहनशील स्त्री के रूप में हमारे समक्ष आती है। इतना कुछ घटित होने के बाद भी वह साहस नहीं खोती है और अपनी विधवा बहू की शादी देवर उदय से करवा देती है। वह कहती है, ''अन्याय हम नहीं होने देंगे....हमारे रहते जा अनर्थ नहीं हो सकत।''[159] उसके पति को यह बात अच्छी नहीं लगती है और उसे मारने के लिए स्लो पायजनिंग का सहारा लेता है। उससे उसकी मृत्यु हो जाती है।

इदन्नमम यह एक नायिका प्रधान उपन्यास है। बऊ (दादी), प्रेम (माँ) और मन्दा तीन ऐसे मुख्य पात्र हैं, जो तीन पीढ़ियों को दर्शाते हैं। इसकी मुख्य कहानी बऊ और मन्दा के इर्द–गिर्द घूमती है। बऊ के बेटे महेन्द्र सिंह की हत्या राजनीतिक षड़्यन्त्रों से की जाती है। विधवा बहू प्रेम के घर छोड़ने और अपने बेटे की जायदाद के लिए मुकद्दमा लड़ने से घबराकर वह अपना गाँव सोनुपरा छोड़ देती है। वह श्यामली गाँव के प्रधान पंचम सिंह की शरण लेती है, क्योंकि मन्दा की माँ षड़्यन्त्रकारियों का शिकार होकर घर छोड़कर भाग जाती है और वह आर्थिक स्तर पर कमज़ोर है। भारतीय सामाजिक व्यवस्था में लड़के–लड़की का भेदभाव पारिवारिक स्तर से ही प्रारंभ हो जाता है। सामाजिक कुसंस्कारों ने नारी के रूप को इतना अधिक विकृत कर दिया है कि लड़की का जन्म लेना माता–पिता के लिए चिंता का कारण बन जाता है। पुरुष के लिए नारी मन बहलाने का साधन मात्र है। ममता कालिया के उपन्यास 'बेघर' की संजीवनी को परमजीत भोग कर छोड़ देता

---

159 मैत्रेयी पुष्पा, बेतवा बहती रही (नयी दिल्ली : किताबघर प्रकाशन, 2010), पृ. 142

है। शिवानी की 'भैरवी' अपने पति की दूसरी शादी से हतप्रभ रह जाती है।'नाच्यो बहुत गोपाल' की माधवी स्थिति का विश्लेषण इस प्रकार करती है–''पुरुष जाति के स्वार्थ और दंभ भरी मूर्खता से ही सारे पापों का जन्म होता है। इसके स्वार्थ के कारण ही उसका अर्धांग नारी जाति पीड़ित है। एकांगी दृष्टिकोण से सोचने के कारण ही पुरुष न तो स्त्री को सती बनाकर ही सुखी कर सका और न वेश्या बनाकर।''[160]

'सागर, लहरें और मनुष्य' में लेखक ने मछुआरों के जीवन का चित्रण किया है। यहाँ नारी प्रधान समाज होने के बावजूद भी नारी पुरुष के अधीन है। मालिक जैसा पुरुष नारी को यातना देने से नहीं चूकता और अत्याचारों की परिणति दुर्गा की जान लेकर होती है। इस संसार में सब कुछ परिवर्तनशील है अगर कुछ भी अपरिवर्तनशील है तो वह है परिवर्तन की अप्रतिहत गति। ठीक उसी प्रकार नारी की भूमिका में चाहे जितने और कैसे भी बदलाव आये हों, किन्तु अगर कुछ नहीं बदला है, तो वह है नारी के प्रति पुरुष का दृष्टिकोण। वह उसे आज भी भोग की वस्तु मानता है। 'डार से बिछड़ी' की पाशो अपनी माँ से बिछड़ जाने के पश्चात् दर–दर की ठोकरें खाती है। एक अधेड़ व्यक्ति से विवाह कर, फिर विधवा होने के पश्चात् अपने ही भाई की वासना का शिकार बनती है। कमलेश्वर का यह कथन सत्य है कि ''जो संस्कृति नारी को मित्र न मानकर भोग्या माने वो इतिहास में किसी अच्छी परम्परा और संस्कारों का निर्माण नहीं कर सकती।''[161]

नारी जीवन से जुड़ी अनेक समस्याओं को प्रेमचंद युगीन एवं प्रेमचंदोतर उपन्यासकारों ने अंकित कर नारी मन की सूक्ष्मताओं को विश्लेषित करने का सर्वोपरि प्रयत्न किया है। आधुनिक युग के बदलने सन्दर्भों एवं नारी उत्थान की नवचेतना के फलस्वरूप उपन्यासकारों ने नारी के अस्तित्व का मौलिक अन्वेषण भी अपने उपन्यासों में किया है।[162]

नारी समस्याओं में मुख्य समस्या है, विधवा समस्या। समाज में विधवाओं का कोई स्थान नहीं। उन्हें अत्यंत हेय दृष्टि से देखा जाता है, उन्हें पुनर्विवाह की

---

160 ममता कालिया के उपन्यास 'बेघर' की संजीवनी, पृ० 145

161 कमलेश्वर, दशा और दिशा, नेशनल पब्लिशिंग, हाउस दिल्ली, 1987

162 सं0 राजेश जोशी– समकालीनता और साहित्य, राजकमल प्रकाशन, नई दिल्ली, 2015

स्वतंत्रता प्राप्त नहीं है। गंगा मैया, मुक्तिपथ, मीठी चुटकी, दुःखमोचन, कोरजा, बूंद और समुद्र आदि उपन्यासों में उपन्यासकारों का ध्यान नारी जीवन के इस पहलू पर भी केन्द्रित हुआ है और उन्होंने इस समस्या का समाधान ढूंढ कर विधवा स्त्री की पुनः प्रतिष्ठा का प्रयास किया है।

आर्थिक स्थिति भी कहीं–न–कहीं नारी जीवन की उन्नति में बाधक रही है। समाज में उत्पादन के साधनों पर पुरुष का एकाधिकार रहा है। दूसरी ओर शिक्षा के अभाव के कारण नारी स्वावलंबन की दिशा में अग्रसर नहीं थी, परिणामतः नारी को आर्थिक रूप से पुरुष के ऊपर निर्भर होना पड़ा। परिस्थितियों में हुए बदलाव से महिलाएँ स्वावलंबन की ओर अग्रसर तो हुई किन्तु उन्हें बाह्य जगत् में अनेक कठिनाईयों का सामना भी करना पड़ा। धन की कमी पुरुष एवं नारी दोनों को विचलित करती है क्योंकि आज के युग में धन ही सब कुछ है। इसके अभाव में व्यक्ति अपने को निस्सहाय महसूस करता है। इन्हीं स्थितियों का वर्णन हमें स्वातंर्त्योतर उपन्यासों में दिखाई देता है। आर्थिक विपन्नता के कारण नारी अपनी शिक्षा पूरी नहीं कर पाती। आर्थिक विपन्नता मनुष्य को चोरी के लिए विवश करती है। 'चौथी मुट्ठी' की मोतिया मस्तानी ने भी यही किया। आर्थिक परिस्थितियां ही नारी को वेश्यावृत्ति के लिए मजबूर करती है। जब तक नारी आर्थिक रूप से आत्मनिर्भर न हो इस समस्या का समाधान नहीं हो सकता। 'बूंद और समुद्र' उपन्यास में लेखक ने आर्थिक दृष्टि से स्वतंत्र न होने की स्थिति में नारी के कष्टों का वर्णन किया है। यही स्थिति 'घरौंदे' में इस प्रकार चित्रित है–''घर की बेजान चीजों की स्वामिनी और जीवित मनुष्यों की दासी। आर्थिक परतंत्रता से उसे बांध दिया गया था। क्या जीवन है जब अपने पर नहीं दूसरों पर गर्व किया जाये ? जिंदा रहना क्या कोई बात है ? कुत्ता जंजीर से बांधकर भूखा रखा जाये तो वह कैसा भी मांस खा सकता है।''[163]

नारी को इन विषमताओं से यदि उबरना है तो उसे स्वावलंबी होना पड़ेगा। पर स्वावलंबन के बाद भी वह पूर्ण स्वतंत्र नहीं है–''घर में यदि नौकरी करने वाली एक युवा लड़की हो, पिता वृद्ध हों, तीन पढ़ने वाले छोटे–छोटे बच्चे हों, पास का

---

163 मैत्रेयी पुष्पा, आत्मा कबूतरी, राजकमल प्रकाशन, नई दिल्ली, 2000 पृ० 125

पैसा बीते युग की कहानी बन चुका हो तो ऐसी स्थिति में कमाऊ बेटी के घर से चले जाने पर घर का खर्च कैसे चलेगा।''[164] इसी प्रकार 'पचपन खंभे लाल दीवार' की सुषमा अपने परिवार के भरण–पोषण के लिए आजीवन अविवाहित रहने का निर्णय लेती है।

पर फिर भी समाज में अपनी स्थिति मजबूत बनाने के लिए नारियों को आर्थिक रूप से सशक्त बनना पड़ेगा और समाज और उसकी व्यवस्थाओं को तोड़कर एक ऐसा समाज बनाना पड़ेगा, जिसमें विवाह, नैतिकता, कलंक और व्यभिचार की मर्यादाएं बदल जायें।

यह सत्य है कि समाज की निरंतर परिवर्तित व्यवस्थायें व्यक्ति को प्रभावित करती है। हर पल बदलते सामाजिक स्वरूप, नयी विचारधारायें, राजनीतिक गतिविधियों ने नारी को भी जाग्रत किया और अस्तित्व बोध कराने में अहम भूमिका निभाई। परिवर्तित चेतना शक्ति के बल पर नारी ने स्वयं को आजाद करने का ठान लिया। अब वह कई बंधनों से मुक्त होना चाहती थी। पुरुषों को नारी का वह परिवर्तित रूप देखकर आश्चर्य तो हुआ, पर उन्हें इसे स्वीकारना भी पड़ा, क्योंकि यह युग की मांग थी। नारी की चेतना शक्ति साहित्यकारों के लिए नई उम्मीदें लेकर आई। अब साहित्य नारी को देवी नहीं सामान्य चेतना सम्पन्न व्यक्ति मानने लगा और उसके सर्वांगीण विकास और स्वतंत्रता के लिए पहल प्रारंभ हुई। प्रेमचंद इस दिशा में अग्रणी थे। उन्होंने अपने साहित्य में न केवल नारी जीवन से संबंधित समस्याओं का चित्रण किया अपितु इन समस्याओं से निपटने के लिए नारी को प्रेरित भी किया। प्रेमचंद का साहित्य परवर्ती साहित्यकारों के लिए मार्गदर्शक बना।

इस तथ्य से इंकार नहीं किया जा सकता कि बदलते समाज को पहचानने, समयानुसार अपने को ढालने और चेतना शक्ति जाग्रत होने में अहम् भूमिका शिक्षा की है। समाज सुधारकों ने एवं नारी मुक्ति आंदोलनकर्ताओं ने भी स्वीकार किया कि शिक्षा से बढ़कर नारी स्वतंत्रता के लिए कोई अस्त्र नहीं है। इस कारण शिक्षा प्राप्ति द्वारा चेतन नारी का चित्रण साहित्य में हुआ है। यशपाल ने अपने उपन्यासों दादा कामरेड, मनुष्य के रूप, देशद्रोही आदि में नारी शिक्षा को चित्रित कर उनमें स्वतंत्र

164 मैत्रेयी पुष्पा, आत्मा कबूतरी, राजकमल प्रकाशन, नई दिल्ली, 2000 पृ0 241

होने की प्रबल इच्छा का वर्णन किया। इसी प्रकार रांगेय राघव के 'घरौंदे' की लवंग, लीला, रानी और इंदिरा, इलाचंद जोशी के 'निर्वासित' की रमा, नीलिमा और प्रतिमा, जैनेन्द्र के 'कल्याणी' की कल्याणी, 'सुनीता' की सुनीता और 'त्यागपत्र' की मृणाल शिक्षित नारी पात्र हैं।

नारी यदि चेतना युक्त हो तो वह अपने आस–पास के परिवेश को भी जाग्रत करने का कार्य करती है। 'बीज' उपन्यास की उषा के समान हर परिस्थितियों का धैर्यपूर्वक सामना करती है। 'नागफनी का देश' की मदालसा के समान समाज से टकराने की हिम्मत रखती है। 'दादा कामरेड' की शैली के समान अपनी बात स्पष्ट रूप से सबके सामने रखने का साहस उसमें है। आज के उपन्यासों में चित्रित नारी कह सकती है कि मैं उन औरतों में से नहीं हूँ जो अपने व्यक्तित्व का बलिदान करती घूमती है। चंद्रकिरण सौनरेक्सा के उपन्यास 'चंदन चांदनी' की गरिमा प्रगतिशील और स्वतंत्र विचारों की युवती है। वह पुरातन मान्यताओं को स्वीकार नहीं करती। रजनी पनिकर ने 'काली लड़की' उपन्यास में नारी के प्रगतिशील रूप का चित्रण कर यह बताना चाहा कि आज नारी अपने अधिकारों से भी परिचित है।

उषा देवी मित्रा के उपन्यास 'नष्ट नीड़' की सुनंदा अपने सम्मान की रक्षा करती है और नारी स्वतंत्रता को बल प्रदान करती है। निरुपमा सेवती के उपन्यास 'मेरा नरक अपना' की नायिका अमला आधुनिक एवं प्रगतिशील विचारों वाली है। 'रुकोगी नहीं राधिका' की राधिका चेतना सम्पन्न नारी है। वह नारी स्वतंत्रता की पक्षधर बनकर उभरी है। मैत्रेयी पुष्पा के 'विजन' की आभा हर अन्याय का सामना करने में सक्षम है। कृष्णा सोबती के उपन्यास 'मित्रो मर जानी' से नारी का एक स्वच्छंद रूप सामने आया। मित्रो समाज की कुरीतियों के दबाव में अपना जीवन नष्ट करने या नैतिकता की कोरी चादर ओढ़ने के खिलाफ है। रुबी गुप्ता के चरित्र द्वारा अलका सरावगी ने समाज सेविका और अपमान, अन्याय को न सहन करने वाली नारी को चित्रित किया है।

इस प्रकार आज की नारी मुक्ति की अभिलाषी है। पर मुक्ति किससे –''मुक्ति चाहती है हम धन के असम और अनियंत्रित वितरण से मानव द्वारा मानव के

नारकीय शोषण से, दुःख, गरीबी और बढ़ती बेकारी से। युगो बंधे, सड़ते, विशमता के दाह से।''[165]

वस्तुतः नारी स्वतंत्रता से तात्पर्य है नारी के स्वतंत्र अस्तित्व और व्यक्तित्व की मान्तया। साथ ही उसके प्रति एक उदार, आदरपूर्वक, शुचितामय दृष्टिकोण जो अधिक स्वस्थ, संयत और मानवीय हो। नारी का केवल स्वतंत्र निर्णय ले सकना या आर्थिक रूप से स्वतंत्र हो जाना ही सब कुछ नहीं है।सही अर्थों में नारी को सम्मानजनक स्थिति तब प्राप्त होगी जब उसके प्रति समाज का दृष्टिकोण और मानसिकता में परिवर्तन होगा। आज के उपन्यासों में नारी जीवन से संबंधित यही दृष्टिकोण मुखर हो रहा है। यह एक नये समाज की रचना के लिए शुभ संकेत है।

3.4 वासना का शिकार एवं विद्रोही स्वभाव

'झूला नट' उपन्यास में नारी की मनोव्यथा के साथ–साथ पुरुष की मनोव्यथा की भी अभिव्यक्ति हुई है। इसमें पति द्वारा त्यागी एवं देवर द्वारा अपनाई गई नायिका की कहानी है। इस उपन्यास की नायिका शीलो को उसके पति द्वारा केवल इसलिए त्याग दिया जाता है कि उसके हाथ में छः उगंलियाँ हैं। उसका पति उसे छोड़कर घर से भागकर दूसरी शादी कर लेता है। शीलो अपने छठी उंगली को अपने दुर्भाग्य का कारण मानकर इसे काट देती है, और असहनीय दर्द को सहती है। वह अपने पति को पाने के लिए अन्धविश्वासों, जप–तप, पूजा–पाठ, तावीज़ों व व्रत का भी सहारा लेती है। बालकिशन, शीलो से बहुत प्रेम करता है और उसके साथ अपनी अतृप्त काम वासना को भी शांत करना चाहता है, लेकिन उसकी माँ दोनों के मिलन में आड़े आती है। वह अपनी माँ से भी आत्मीय लगाव रखता है, जिसके कारण वह शीलो एवं माँ के बीच पीसता रहता है। इस उपन्यास में बालकिशन की स्थिति झूलते हुए नट की तरह है, जिसके एक छोर पर शीलो है और दूसरे पर उसकी माँ। इन्द्र प्रकाश पाण्डेय के अनुसार, ''वह बेचारा मर्द साँप का काटा नहीं औरत का मारा है, जिसका इलाज़ हकीम लुकमान के पास भी नहीं

---

165 ज्ञानवती अरोड़ा – समसामयिक हिन्दी कहानी में बदलते परिवारिक सम्बन्ध, पृ0सं0 22

है।''[166] इसमें अन्धविश्वासों, पुराने रीति–रिवाज़ों, अनमेल विवाह एवं पारिवारिक विघटन जैसी समस्याओं को चित्रित किया है।

इनके उपन्यास अपने सरोकारों में नारी संवेदना और यथार्थ की दिशा में महत्त्वपूर्ण आयाम खोले हैं। मैत्रेयी पुष्पा ने नारी की दुःख–दर्द, संताप, पीड़ा, संवेदना, रूढ़ व्यवस्था की दास्तान पुरानी परम्पराओं एवं शोषण की शिकार तथा उसकी जकड़न में कसमसाती हुई संवेदनशील नारी का यथार्थ अंकन अपने प्रमुख उपन्यासों में की है।वर्तमान युग में नारी विभिन्न क्षेत्रों में अपनी पहचान बना रही है। राजनीति, साहित्य, शिक्षा, विज्ञान, कला आदि क्षेत्रों में वह सक्रिय है। लेकिन यह प्रगति देश की औसत नारी की नहीं है। आज नगर, महानगर की नारी जहाँ प्रगति की सीढ़ियाँ लाँघ रही है वहाँ गाँव, अंचल की नारी मात्र आज भी पूर्णतः शोषण की मध्ययुगीन सामंती परंपरा से मुक्त नहीं हो पाई है। पिछड़े गाँव तथा अंचलों में निरक्षरता, आर्थिक परवशता, रूढ़िवादिता, रूग्ण मान्यताएँ आदि नारी की प्रगति में बाधा बने हैं। वहाँ नारी की ओर देखने का नजरिया भी नहीं बदला है। वह पूरी निष्ठा से चारदीवारी में रहकर भारतीय परंपराओं का निर्वाह कर रही है। दूसरी ओर नगर में नारी पाश्चात्य अंधानुकरण के पीछे बेतहाशा दौड़ लगा रही है अर्थात समग्र भारतीय नारी जीवन में विषमता है। एक ओर रुग्ण परंपराओं के कारण अभिशप्त जीवन है तो दूसरी ओर अंधानुकरण के कारण वह अपनी पहचान खो रही है। ग्रामीण, आंचलिक नारी का जीवन विभिन्न अंतर्विरोधों से घिरा है। उसका दाम्पत्य जीवन नगरीय नारी की तुलना में काफी संतोषप्रद है लेकिन वह बाह्य शक्तियों की शिकार बन रही है। वैसे बाह्य शक्तियाँ नगरीय जीवन में भी नारी का दोहन कर रही हैं। समग्रतः भारतीय नारी की दशा संतोषप्रद कही नहीं जा सकती। डॉ० आशारानी व्होरा का मत द्रष्टव्य है, महाभारत की औसत नारी आज भी सामाजिक दृष्टि से उतनी ही पिछड़ी है। इसलिए या तो वह अपने हितों और हकों से अनभिज्ञ हैं या हित–स्वार्थ में नए प्राप्त हकों का दुरुपयोग करने लगी है। नगर में नारी आत्मनिर्भर बनने के बावजूद सुरक्षित है ऐसा दावा नहीं किया जा सकता। बीसवीं सदी का अंतिम दशक बीतने के बाद यह स्पष्ट एहसास हो गया है

---

166 इन्द्र प्रकाश पाण्डेय (सं.), दस्तावेज (इलाहाबाद : बाई का बाग, अप्रैल–जून, 2004), पृ. 55

कि आम महिलाओं की रोजमर्रा की जिंदगी बदतर अर्थात असुरक्षित बन गई है। घर में अपनी अस्मिता के लिए संघर्षरत नारी बाहर मात्र खुलेआम पुरुषों के अत्याचारों का शिकार बन रही है। "भले ही भारतीय महिलाएँ ब्रह्माण्ड सुंदरी तथा विश्व सुंदरी का खिताब जीतकर राष्ट्रपति तथा प्रधानमंत्री से हाथ मिलाने लगी हैं, लेकिन औसतन पूरे देश की महिलाओं के खिलाफ अत्याचार बढ़ रहे हैं। भारत के दूर–दराज के गाँवों में मोटे तौर से आज भी हालात ऐसे हैं कि यदि आप एक दलित हैं, उस पर भी औरतजात तो प्रताड़ना और उत्पीड़न आपके जीवन का अनिवार्य हिस्सा बनते चले जाते हैं।[167]

मैत्रेयी पुष्पा ने अल्मा कबूतरी उपन्यास में जनजातीय नारी के माध्यम से नारी चेतना और अस्मिता की सशक्त अभिव्यक्ति की है। झूरी, कदमबाई और अल्मा जैसे नारी चरित्र इस उपन्यास की महत् उपलब्धि है। अल्मा में जनजातीय नारी के लक्षणों के साथ परिवर्तित विचार भी मौजूद हैं। वह आपत्तियों का डटकर मुकाबला करती है। संघर्ष की आग को बुझने नहीं देती, भटकन के बावजूद हार नहीं मानती। अल्मा लेखिका की संवेदना है। उसी के माध्यम से नारी चेतना और विमर्श उजागर हुआ है। लेखिका ने अल्मा के चरित्र को परिपूर्ण बनाने हेतु कोई कोताही नहीं बरती है। लेखिका को इसमें सफलता भी मिली है लेकिन अल्मा की स्वाभाविकता बाधित हुई है। अल्मा कठपुतली–सी बनी है। अल्मा का मंत्री पद तक का सफर मात्र अविश्वसनीय ही नहीं अपितु आरोपित लगता है। इसी कारण डॉ० सत्यकाम 'अल्मा कबूतरी' को अर्थपूर्ण रचना मानने के बावजूद लिखते हैं, अल्मा कबूतरी में अल्मा कबूतरी की कहानी ही सबसे कमजोर हो गई है। यह चटक है, मजेदार है, मसालेदार, रोमांचक है, परंतु नकली है। इसकी कथा में हल्कापन भी है। उपन्यास के इस अंश को पढ़कर गुलशन नंदा के उपन्यास की याद आती है। लेखिका ने नैतिक दबावों की मात्र धज्जियाँ उड़ा दी है। वह नारी की स्वाभाविक शक्ति को उजागर करती है। अल्मा का राणा को पुरुष बनना इसका उदाहरण है। दूसरी ओर धीरज पर पुरुष द्वारा रचाया बलात्कार पुरुष की शोषित और बहशी मानसिकता उजागर करती है। अल्मा अंततः सफल हुई ऐसा कहा नहीं जा सकता

167 विजय बहादुर सिंह – वसुधा, अंक–72 जनवरी–मार्च 2007, पृ0सं0 116

है। यदि कहा भी जाए तो उसकी सफलता लेखिका की है। अल्मा महत्त्वपूर्ण तो बनी है पर छोटे से तंबू से निकल बड़े तंबू में डैने पसार कलाबाज़ियाँ दिखाने वाले परिंदे की ही नियति तक पहुँची है। वैसे देखा जाए तो अल्मा का मूल झूरी में है जो कदमबाई से विकसित होता हुआ अल्मा में परिवर्तित हुआ है। तीनों में अस्मिता और विद्रोह है लेकिन संघर्ष की अपनी राहे हैं। कदमबाई शोषित और अपने तथा बाह्य समाज से प्रताड़ित है। उसमें अकाट्य साहस और जिजीविषक है। कदमबाई के माध्यम से जातीय जिंदगी का अन्वेषण हुआ है। उसकी तुलना में अल्मा कमजोर है। जिस ढंग से कब तक पुकारुँ की करनट प्यारी और कजरी का चरित्र विकसित हुआ है वैसे अल्मा का नहीं हो पाया है। ''शैलूष की सब्बो से मात्र वह अलग बनी है।''[168]

अन्य उपन्यासों में नारी चरित्र हाशिए पर मिलते हैं बावजूद अपनी पहचान बनाते हैं। डूब की लुहारन गोराबाई के माध्यम से ग्रामीण नारी की एक अनूठी तस्वीर उजागर हुई है। पार की तेजस्विनी पति रामदुलारे के कंधे से कंधा मिलाकर संरचनात्मक योगदान देती है। बीस बरस की पवित्रा और वंदना गाँव के जीवन में पनपनेवाली नई नारी अस्मिता की प्रतीक है। वंदना अपनी अस्मिता के लिए ही नहीं गाँव की नारी अस्मिता के लिए संघर्षरत मिलती है। शिक्षित दलित पवित्रा गाँव के शोहदों को सबक सिखाती है। उनके साहसी कारनामों से दामोदर तक सोचता है, मुझे लगा कि इस गाँव के भीतर एक और गाँव जन्म ले रहा है। जंगल जहाँ शुरू होता है उपन्यास में मलारी का चरित्र अपनी पहचान बनाता है। वह पुलिस, डाकू आदि की वासना का शिकार बनती है। ''बावजूद एस0 पी0 कुमार उसकी नैतिक धाक से डाँवाडोल होता है। दूसरी ओर इन उपन्यासों में नारी शोषण की अधिकता पाई जाती है। डूब, पार, जंगल जहाँ शुरू होता है, गगन घटा घहरानी, अल्मा कबूतरी इन उपन्यासों में जनजातीय नारी पुलिस और सामंती शक्तियों द्वारा शोषित पाई जाती है। इस शोषण का न अंत है न कहीं सुनवाई। वे घुट–घुटकर इसे सहने को अभिशप्त है। विरोध करने वाली एखाद का ही चुनिया या हीरामनी मिलती

---

168 मैत्रेयी पुष्पा, आत्मा कबूतरी, राजकमल प्रकाशन, नई दिल्ली, 2000 पृ० 56

है। अन्यथा अक्कल कदम, झूरी, मलारी जैसी कई नारियाँ इसे नियति मानकर सहती है।''[169]

3.5 सास–बहू

सामाजिक परिप्रेक्ष्य के अन्तर्गत पारिवारिक सम्बन्धों में सास–बहू के बीच के रिश्ते को जानने के लिए विभिन्न पक्षों का अवलोकन विचारणीय है। यह एक ऐसा सम्बन्ध है जिस पर सम्पूर्ण परिवार के सम्बन्ध निर्भर करते हैं। सास–बहू सम्बन्ध के बारे में अजिता के. नायर ने विचार व्यक्त करते हुए कहा है, ''आज सास और बहू के बीच सम्बन्ध ऐसा हो गया है कि सास अपनी बहू को अपने प्यार का पात्र नहीं मान सकती है, प्रत्युत् अनुभव करने लगती है कि वह अपने बेटे के प्यार को उससे हड़पने के लिए आई है। सास के प्रति बहू के मन में भी रूख सद्भाव पूर्ण नहीं है। उसकी दृष्टि में सास इतनी पोसेससीव लगती है कि वह उसे अपने पति को पूर्णतः अपनाने नहीं देती है।''[170] इससे स्पष्ट होता है कि घर में सास–बहू के बीच हमेशा खींचातानी चली रहती है। दोनों ही अपने कर्त्तव्यों और अधिकारों को समझें, तो यह सम्बन्ध बहुत ही मधुर हो सकता है, लेकिन वास्तव में ऐसा नहीं होता है। यदि अधिकारों की अपेक्षा दोनों अपने कर्त्तव्यों व जिम्मेदारियों पर ध्यान दें, तो परिवार में शांति का वातावरण होगा। मैत्रेयी पुष्पा ने अपने उपन्यासों में सास–बहू सम्बन्ध के विविध रूपों का चित्रण किया है।

'इदन्नमम' उपन्यास में बऊ और प्रेम के माध्यम से कटु सास–बहू सम्बन्धों का चित्रण हुआ है। प्रेम अपने पति महेंदर सिंह की मृत्यु के बाद टाउन–एरिया के चेयरमैन रतन यादव से शादी कर लेती है। बऊ अपनी बहू के इस कदम से उससे बहुत नाराज़ होती है। वह मन्दा को अपने साथ रखती है। प्रेम अपनी बेटी मन्दा को अपने साथ रखने के लिए केस कर देती है। बऊ और प्रेम के बीच हमेशा टकराव होता रहता है। मन्दा अपनी दादी बऊ से कहती है कि मैं माँ को समझाऊँगी, तब बऊ कहती है, ''ईसुर करे, महामाई चाहे तो ऐसा ही हो। पर मन्दा

---

169 एस0 पी0 कुमार, स्त्री विमर्शःभारतीय परिप्रेक्ष्य, वाणी प्रकाशन, नई दिल्ली, संस्करण–2010

170 अजिता के. नायर, सत्तरोत्तर हिन्दी कहानियों में बदलते सम्बन्ध (मथुरा : जवाहर पुस्तकालय, में 2001), पृ. 133

तें जानती नहीं है अपनी मतारी को।''[171] तब मन्दा अपनी दादी को कहती है, ''बऊ, तुम अम्मा से दोस्ती काहे नहीं कर लेतीं?''[172] यहाँ स्पष्ट होता है कि बऊ–प्रेम के बीच तनाव की स्थिति है। उनके बीच कटु सम्बन्ध हैं। दोनों अपने अधिकारों की माँग करती रहती हैं, जिससे उनके बीच हमेशा टकराव होता रहता है।

'झूला नट' उपन्यास में सास–बहू सम्बन्ध के रूप में खट्टे–मीठे अनुभवों का चित्रण हुआ है। इसमें दोनों कभी लड़ती हुई नज़र आती हैं, तो कभी आपस में प्रेमभाव से एक–दूसरे के दुःखों को बांटती हुई नज़र आती हैं। शीलो की सास यानी अम्मा का बेटा सुमेर शहर में पहले से ही शादी कर चुका है। जब शीलो, उसकी सास और बालकिशन को इस बात का पता चलता है, तो सभी दुःख में डूब जाते हैं। वह अपनी बहू को दिलासा देती है और उसके दुःख को दूर करती है। बालकिशन सास–बहू को एक साथ देखकर कुछ समझ नहीं पा रहा था।

''बालकिशन की समझ में जितना आया, वह यह कि वे दोनों सास–बहुओं के नाते से छिटककर दो औरतों की तरह रहती थीं। उस समय यह ज्ञान नहीं था कि एक विधवा है दूसरी परित्यकता। देह के चलते वे एक–दूसरे की व्यथा समझती हैं।''[173]

यहाँ स्पष्ट होता है कि शीलो और उसकी सास में मधुरता भी है और कड़वाहट भी है। सास–बहू के रिश्ते के नाते दोनों आपस में लड़ती हैं, लेकिन औरत के नाते एक–दूसरे का दर्द भी समझती हैं।

'अगनपाखी' उपन्यास में भुवन नामक पात्रा है, जिसकी शादी एक पागल व्यक्ति से कर दी जाती है। जब वह अपने मायके में आकर इस बात को बताती है, तो उसकी माँ उसे डाँटती है कि यदि तूने चन्दर के साथ भागना तो भाग जाती। हम तेरे जुलुम सह लेते। वह अपनी माँ की बातें सुनकर बिलबिला जाती है और कहती है कि मेरे पति को सुख–दुःख में कोई अन्तर पता नहीं। वह सर्दी में भी पूरी रात हाथ–पाँव धोता रहता है और मुझसे भी वही करवाता है। वह अपने और अपनी सास के सम्बन्ध को स्पष्ट करती हुई कहती है, ''मैं बहू का व्रत पूरी तरह निभा

---

171 मैत्रेयी पुष्पा, इदन्नमम (नयी दिल्ली : राजकमल प्रकाशन, 1999), पृ. 97
172 मैत्रेयी पुष्पा, इदन्नमम (नयी दिल्ली : राजकमल प्रकाशन, 1999), पृ. 97
173 मैत्रेयी पुष्पा, झूला नट (नयी दिल्ली : वाणी प्रकाशन, 1999), पृ. 67

रही हूँ, कोताही करूँ तो सास की साँस रूकने लगती है।''[174] स्पष्ट होता है कि भुवन और उसकी सास के बीच का सम्बन्ध नाममात्र का है। वह अपनी सास की हर बात मानती है और उसके पागल बेटे की दिन–रात सेवा करती है। यदि वह ऐसा नहीं करती है, तो उसकी सास दुखी हो जाती है। यहाँ पर सास–बहू के बीच कोई लगाव या टकराहट नहीं है। उसकी सास को अपने बेटे की चिन्ता है। बहू तो उसके लिए आया के समान है, जो उसके बेटे की देखभाल करती है।

'कही इसुरी फाग' में सास–बहू सम्बन्ध में मधुरता देखने को मिलती है। एक बार जब फगवारे ने अपनी फाग में रज्जो का नाम लिया तो उसकी सास ने भी सुन लिया। वह यह सब देखकर रोने लग पड़ी। वह अपनी सास से कहती है कि बाई फगवारा लुच्चा है। अगली बार वह आएगा तो मैं उसके पीछे कुत्ता छोड़ दूँगी। वह सास को अपनी बाँहों में भरकर रो रही थी। सास रज्जो को अपनी बेटी समझकर दिलासा देते हुए कहती है। ''ना, रज्जो ना। तें कहू न कइयो। हम खुद देखे लेंगे'[175] इस प्रकार स्पष्ट होता है कि सास–बहू के बीच प्रेमभाव है। वह एक–दूसरे को समझती हैं।

'त्रिया–हठ' उपन्यास में सास–बहू सम्बन्धों का यथार्थ चित्रण हुआ है। अजीत नौकरी पर चला जाता है और घर पर सास–बहू रहती हैं। ''पीछे सास–बहू का अपना व्यवहार रह गया कभी मेल हो तो कभी अखाड़ा जुटे। कभी रोटी न बने तो कभी रँधी खीर कुत्ता तक न खाए। दोनों का मेल–मिलाप कौन कराए? जो कराए, वह गालियाँ सुने। वैसे यह तो घर–घर का किस्सा है। बहुएँ बिटिया हो जातीं या सासें माँ का स्वभाव धर लेतीं तो रोने ही काए के थे? साँची बात तो यह है कि अजीत की बिमला सौ काम उठाए तो भी डुकरिया को उर्वशी के सपने।''[176]

यहाँ पर लेखिका ने स्पष्ट किया है कि यदि सास–बहू को बेटी माने और बहू–सास को माँ तो घर में कभी झगड़ा न हो, लेकिन यह शायद कभी नहीं हो सकता है। दोनों अपने अहम् के कारण दूर–दूर रहती हैं।

---

174 मैत्रेयी पुष्पा, अगनपाखी (नयी दिल्ली : वाणी प्रकाशन, 2001), पृ. 72

175 मैत्रेयी पुष्पा, कही ईसुरी फाग (नयी दिल्ली : राजकमल प्रकाशन, 2004), पृ. 40

176 मैत्रेयी पुष्पा, त्रिया–हठ (नयी दिल्ली : किताबघर प्रकाशन, 2010), पृ. 80

अतः कहा जा सकता है कि सास–बहू सम्बन्ध परिवार का अहम् सम्बन्ध है। इन पर परिवार के अन्य रिश्ते निर्भर करते हैं। यदि परिवार में सास–बहू सम्बन्ध मधुर होंगे, तो परिवार का माहौल भी आनन्दमयी होगा। यदि सास–बहू सम्बन्ध कटु होंगे, तो परिवार में हमेशा कलह, झगड़े और अशान्ति का वातावरण होगा। मैत्रेयी पुष्पा ने अपने उपन्यासों में सास–बहू के मधुर व कटु सम्बन्धों का यथार्थ चित्रण किया है। इन्होंने अपने उपन्यासों के माध्यम से यह संदेश देना चाहा है कि यदि सास–बहू माँ–बेटी की तरह रहें, तो उनके बीच का सम्बन्ध भी मधुर होगा और मन में कोई मनमुटाव भी न होगा। कहा जा सकता है कि आज समाज में सास–बहू सम्बन्धों की विशेष भूमिका है। आज परिवार इन्हीं सम्बन्धों के गड़बड़ हो जाने के कारण टूटते जा रहे हैं और परिवार के अहम् सम्बन्ध या रिश्ते खत्म होते जा रहे हैं।

3.6 माता–पिता पुत्र

माता–पुत्र सम्बन्ध परिवार का बहुत ही मधुर सम्बन्ध है। यह सम्बन्ध प्रेम से लबालब, त्याग एवं समर्पण का द्योतक है। बेटा अपनी माँ के प्रति निर्दयी हो सकता है, लेकिन एक माँ कभी नहीं। वह अपने पुत्र को आवश्यकता से अधिक प्रेम देती है। मैत्रेयी पुष्पा ने अपने उपन्यासों में माता–पुत्र सम्बन्धों को समाज में उपलब्ध विविध रूपों में चित्रित करने का प्रयास किया है।

'स्मृति दंश' उपन्यास में माता–पुत्र सम्बन्ध में प्रेमभाव का चित्रण हुआ है। इसमें चन्दर की माँ की मृत्यु हो जाती है। उसके पिता द्वारा दूसरी शादी कर ली जाती है, लेकिन सौतेली माँ होने पर भी वह उसे सगी माँ जैसा प्यार देती है। वह उससे कभी सौतेला व्यवहार नहीं करती है। चन्दर कहता है, "कहने को तो अम्मा मेरी दूसरी माँ थी यानि सौतेली.......लेकिन अपनी जन्मदायिनी और अम्मा में कोई फर्क हो सकता है, ऐसा कभी महसूस नहीं हुआ।"[177] स्पष्ट होता है कि माता–पुत्र सम्बन्ध अत्यधिक मधुर एवं मनमोहक हैं। मैत्रेयी पुष्पा ने माता–पुत्र सम्बन्धों को कलंकित नहीं होने दिया है। लेखिका के मन में माता–पुत्र सम्बन्धों की पवित्रता में अधिक विश्वास है।

---

177 मैत्रेयी पुष्पा, स्मृति दंश (नयी दिल्ली : किताबघर प्रकाशन, 1990), पृ. 9

'इदन्नमम' उपन्यास में छिटपुट रूप में माता–पुत्र सम्बन्ध का चित्रण हुआ है। यहाँ पर पिरभु और उसकी माँ का सम्बन्ध बहुत ही मधुर रूप में चित्रित हुआ है, लेकिन इसमें इस सम्बन्ध पर खुलकर चर्चा नहीं की गई है।

'झूला नट' उपन्यास में भी माता–पुत्र सम्बन्ध का चित्रण हुआ है। यह उपन्यास एक जुझारू माँ, दो बेटों और एक बहू के सम्बन्धों के इर्द–गिर्द उलझा हुआ है। इसमें सुमेर और बालकिशन दो बेटे हैं, लेकिन दोनों के व्यवहार में ज़मीन आसमान का अन्तर है। माँ अपने दोनों बेटों से बहुत प्यार करती है। सुमेर शहर में दरोगा है और बालकिशन कम पढ़ा–लिखा होने के कारण घर में रहकर खेती–बाड़ी का काम करता है। सुमेर अपनी बीबी शीलो को छोड़कर शहर में गृहस्थी बसा लेता है। वह गाँव से सामान ले जाता है। उसकी माँ को ये बात पता नहीं है। वह सोचती है कि शहर में मिलावटी सामान मिलता है, तो सुमेर घर से सामान ले जा रहा है। वह कहती है, ''शहर में मिलती हैं नकली चीजें। घी में घासलेट, नाज में ककरा–पथरा। सुमेर कह रहा था–दाल तेल ऐसे अम्मा कि खाते ही हाथ–पाँव सूज जाएँ। आग लगै ऐसे शहर में। हम तो अपने सुमेर को हर महीना पहुँचा सकते हैं। फिर, क्या उसका हिस्सा नहीं?''[178] उपर्युक्त वक्तव्य में एक माँ की अपने बेटे के प्रति प्यार और चिन्ता दोनों दिखाई देती हैं, लेकिन जब उसे पता चलता है कि उसके बेटे सुमेर को हम लोगों से कोई मोह नहीं, तो वह उदास हो जाती है और रोती है। जब बालकिशन को अम्मा के दुःख का पता चलता है तो वह तड़फ उठता है।

''बालकिशन तब पूरी तरह विचलित हो उठा, जब उसे पता लगा कि अम्मा तो धीरे–धीरे रो रही हैं। वह लपककर माँ के पास आ बैठा। अम्मा से सट गया, उसकी साँसे आग की झार। भपारे से उठ रहे हैं। भइया की पीठ फिरते ही अम्मा को उनका षड्यन्त्र समझ में आने लगा?''[179] स्पष्ट होता है कि बालकिशन और उसकी माँ में मधुर सम्बन्ध हैं। जब बड़ा बेटा सुमेर अपनी माँ और परिवार को छोड़कर शहर में गृहस्थी बसा लेता है, तो अम्मा अपने बेटे के इस निर्णय से बहुत

---

178 मैत्रेयी पुष्पा, झूला नट (नयी दिल्ली : राजकमल प्रकाशन, 1999), पृ. 38

179 मैत्रेयी पुष्पा, झूला नट (नयी दिल्ली : राजकमल प्रकाशन, 1999), पृ. 39

दुखी हो जाती है। बालकिशन अपनी माँ को दुखी देखकर स्वयं भी दुखी और विचलित हो जाता है।

'अल्मा कबूतरी' उपन्यास में भी माता–पुत्र सम्बन्ध का चित्रण हुआ है। कदमबाई व उसके बेटे राणा में असीम प्रेम है। कदमबाई अपने बेटे के लिए कुछ भी कर गुजरती है। एक बार जब वह बीमार होता है, तो उसके लिए पैसों की ज़रूरत होती है। वह अपने बेटे के इलाज़ के लिए दुल्हन के गहने तक उतरवा लेती है, क्योंकि वह एक कबूतरी है और इनका पेशा चोरी व लूटपाट करना है। राणा को चोरी करना पसन्द नहीं है। माँ–बेटा दोनों ही एक–दूसरे के प्रति प्रेमभाव रखते हैं। एक बार कदमबाई अपने बेटे राणा को निःसहाय पड़ा देखकर रोने लगती है, तो बेटा भी अन्दर ही अन्दर रोता है। ''माँ को रोती देखकर पास सरक आया। अपराधी की तरह सिर झुकाकर बैठा रहा।''[180] इससे स्पष्ट होता है कि माता–पुत्र सम्बन्ध बहुत ही मधुर हैं। दोनों एक–दूसरे के दुःख से दुखी होते हैं। कदमबाई अपने बेटे की खुशी के लिए उसे रामसिंह के पास गोरमछिया भेजने का फैंसला लेती है। वह अपने बेटे को अपने से दूर कर देती है, क्योंकि उसे पता है कि राणा हमारी जाति के लोगों के साथ नहीं रह सकता है और न ही ऐसा खाना उसे पसन्द है।

दूसरी ओर आनन्दी और उसके दो बेटे जोधा और करन हैं। इनका सम्बन्ध खट्टा–मीठा है, लेकिन जोधा अपनी माँ के ज्यादा करीब है। जब आनन्दी अपने पति के कबूतरी से सम्बन्ध होने पर दुखी होती है, तो जोधा अपने पिता के विरूद्ध हो जाता है। ''माँ का रोना कौन सा बेटा देख सकता है? ऊपर से जोधा ने पिता का इकबालिया बयान सुन लिया था। बेशर्म आज़ादी के दीवाने को जोधा श्रमदान नहीं दे पाया। ...जोधा खटिया पर लेटे पिता के ऊपर धूल बरसाने लगा।

आँधी–तूफान सा बेटा।''[181] स्पष्ट होता है कि बेटा अपनी माँ को रोता देखकर अपना होश खो बैठता है और अपनी माँ के अधिकार के लिए अपने पिता से झगड़ा कर बैठता है। बेटा माँ के दुःख–दर्द, सन्ताप व व्यथा को देखकर

---

180 मैत्रेयी पुष्पा, अल्मा कबूतरी (नयी दिल्ली : राजकमल प्रकाशन, 2000), पृ. 52
181 मैत्रेयी पुष्पा, अल्मा कबूतरी (नयी दिल्ली : राजकमल प्रकाशन, 2000), पृ. 93–94

व्याकुल हो उठता है। मैत्रेयी पुष्पा ने इस उपन्यास में माता–पुत्र सम्बन्ध का अत्यन्त मनोहर और मार्मिक चित्रण किया है।

'विज़न' उपन्यास में भी माता–पुत्र सम्बन्ध का चित्रण हुआ है। मुकुल की शादी मालदार घर में होती है। वह अब अपने माता–पिता के साथ नहीं रहता था। उसकी माँ अपने बेटे की याद में बीमार हो गई। उस पर किसी भी दवाई का असर नहीं हो रहा था। मुकुल को जब अपनी माँ की इस अवस्था का पता चलता है, तो वह भी तड़फ उठता है। मुकुल की माँ लोगों को यह कहकर डाँटती है कि "बेटा–बहू डॉक्टर हैं। अपना काम छोड़कर रोज़ हमारे पास ही बैठे रहें? आते जाते तो हैं, कितना आयें?"[182] स्पष्ट होता है कि मुकुल और उसकी माँ के बीच मधुर सम्बन्ध हैं, तभी तो वह अपने बेटे का पक्ष लेकर लोगों के मुँह बन्द कर देती है। माँ तो माँ होती है। वह अपने बच्चों की बुराई कभी नहीं सुन सकती।

'चाक' उपन्यास में माता–पुत्र सम्बन्ध सारंग–चन्दन के माध्यम से चित्रित हुए हैं। सारंग अपने बेटे से अत्यधिक प्रेम करती है। जब उसका पति अपने बेटे को जबरदस्ती शहर में अपने बड़े भाई के पास भेज देता है, तो सारंग बेटे के बिछोह में तड़फ उठती है। वह अपने पति के निर्णय के विरूद्ध जाकर बेटे चन्दन को वापिस अपने पास बुला लेती है। चन्दन भी अपनी माँ से बहुत प्रेम करता है। जब चन्दन शहर से वापिस आता है, तो माता–पुत्र का प्रेमभाव देखते ही बनता है। "चन्दन खुद ही आ समाया बाहों में। आँखें मूँदें, बाहों में बेटे को भींचे, सुधि–बुधि खोए खड़ी है। नसों में खून ऐसे उमड़–उमड़ पड़ रहा है, जैसे छातियों में दूध–भरकर आता था एकदम से। सिर, आँखें, गाल, नाक, कान, कंधे सब कुछ छू–छूकर महसूस कर रही है।"[183] उपर्युक्त वक्तव्य से स्पष्ट होता है कि माता–पुत्र में बहुत प्रेम है। दोनों ही एक–दूसरे से मिलकर असीम आनन्द की अनुभूति करते हैं। सारंग तो अपने बेटे के मोह में सुध–बुध खो बैठी है। वह अपने बेटे के लिए अपने पति के विरूद्ध चली जाती है। स्पष्ट होता है कि मैत्रेयी पुष्पा ने इस उपन्यास में माता–पुत्र सम्बन्ध का अत्यन्त मार्मिक चित्रण किया है।

---

182 मैत्रेयी पुष्पा, विजन् (नयी दिल्ली : वाणी प्रकाशन, 2002), पृ. 104

183 मैत्रेयी पुष्पा, चाक (नयी दिल्ली : राजकमल प्रकाशन, 2004), पृ. 180

'कही ईसुरी फाग' में माता–पुत्र सम्बन्ध का मार्मिक चित्रण हुआ है। प्रताप फौज में भर्ती हो गया है। वह सोचता है कि खेती करने के पीछे माँ थी और फौज में भाग जाने का कारण रज्जो है। माँ अपने बेटे को अपने से दूर होते देख विचलित हो जाती है। ''माँ बेटे को चलते देख साक्षात हूक सी उठी। आगे बढ़कर अपनी बूढ़ी बाहों में प्रताप का सिर भर लिया। माथा चूमा जैसे माँ का यही खजाना हो। इसी तरह बेटे को छूकर माँ को अपने माँ होने की चेतना हुई।''[184] उपर्युक्त वक्तव्य से माँ–बेटे का स्नेहपूर्ण सम्बन्ध देखने को मिलता है। प्रताप भी अपनी माँ से बहुत प्यार करता है, लेकिन अपनी पत्नी को ईसुरी फगवारे की ओर मोहित होते हुए देख वह फौज में जाने का मन बना लेता है।

इसी तरह प्रताप भी अपनी माँ से दूर होते समय तड़फ उठता है। ''वह रोना नहीं चाहता था, मगर धीरे–धीरे रोने लगा। प्रताप की आँखों में कितने आँसू आए, मालूम नहीं पर मर्दाना स्वर भयंकर था। वृद्धा डर गई।''[185] अतः यहाँ स्पष्ट होता है कि बेटा प्रताप अपनी माँ से अलग होते हुए अपना दुःख और आँसू रोक नहीं पाता है। माँ–बेटे का आपस में गहरा प्रेम है। दोनों के सम्बन्ध का मार्मिक चित्रण हुआ है।

'बेतवा बहती रही' उपन्यास में माता–पुत्र सम्बन्ध में कड़वाहट है। यहाँ पर अजीत अपनी माँ के प्रति क्रूर रवैया अपनाता है। वह अपनी नौकरी के लिए अपनी माँ के गहने तक बेचने को तैयार हो जाता है। पहले वह अपनी माँ से उन मोहरों को माँगता है, जो उसकी शादी में मिली थीं। बाद में जब पैसे कम पड़ जाते हैं, तो अपनी माँ की पहनी हुई पायलें भी माँग लेता है। ये पायलें उसकी सास ने उसे पहनाई थीं। बेचारी माँ असमंजस में पड़ गई। ''अब क्या कहे पुत्र से? अवसादमयी बेबसी से कुछ क्षण देखती रही। फिर बेटे की लाचार दशा पर पिघल उठी। चुपचाप दोनों पाँवों से पेंजना उतारकर अजीत के हाथों में थमा दिये।''[186] यहाँ स्पष्ट होता है कि माता–पुत्र सम्बन्ध में तनाव की स्थिति है। पुत्र अजीत अपने स्वार्थ के लिए माँ की भावनाओं तक को कुचल देता है। माँ तो ममतामयी होती है। वह अपने बेटे

---

184 मैत्रेयी पुष्पा, कही ईसुरी फाग (नयी दिल्ली : राजकमल प्रकाशन, 2004), पृ. 119
185 मैत्रेयी पुष्पा, कही ईसुरी फाग (नयी दिल्ली : राजकमल प्रकाशन, 2004), पृ. 119
186 मैत्रेयी पुष्पा, बेतवा बहती रही (नयी दिल्ली : किताबघर प्रकाशन, 2010), पृ. 24

को दुखी कैसे देख सकती है। वह अपने बेटे की मनःस्थिति को समझकर बिना कोई प्रश्न किए चुपचाप अपनी पायलें उसको दे देती है। मैत्रेयी पुष्पा यह संदेश देना चाहती है कि बच्चों को अपनी माताओं की भावनाओं की कदर करनी चाहिए। वर्तमान में अजीत जैसे बेटों की कोई कमी नहीं है।

'त्रिया–हठ' उपन्यास में माता–पुत्र सम्बन्ध का अनोखा चित्रण देखने को मिलता है। इस उपन्यास में उर्वशी–देवेश के माध्यम से माता–पुत्र सम्बन्ध का चित्रिण हुआ है। इसमें अनोखी बात यह है कि माँ मर चुकी है और बेटा देवेश अपनी माँ के जीवन के ऊपर किताब लिख रहा है। वह अपनी माँ के जीवन से जुड़े लोगों से मिलता है और अपनी माँ के जीवन के बारे में जानकारी हासिल करता है। वह अपनी माँ की सहेली मीरा से कहता है, "किस नाते की जड़ कहाँ होती है जिज्जी? जड़ में माँ ही होती है न? वह कहीं मिटती है?"[187] देवेश के कथनों से स्पष्ट होता है कि वह अपनी माँ के प्रति उच्च विचार रखता है। वह अपनी माँ के अच्छे–बुरे दोनों ही पलहुओं को स्वीकार करने को तैयार है। माँ के न होने पर भी उसके जीवन के बारे में जानने की उत्सुकता उसकी माँ के प्रति उसकी श्रद्धा प्रेम व अपनेपन को दर्शाती है।

अतः कहा जा सकता है कि मैत्रेयी पुष्पा ने अपने उपन्यासों में माता–पुत्र सम्बन्ध का मधुर व प्रेम रूप में अधिक चित्रण किया है। इनके एक–दो उपन्यासों को छोड़कर लगभग सभी उपन्यासों में इस सम्बन्ध का मनमोहक चित्रण हुआ है, क्योंकि मैत्रेयी माँ–पुत्र के मधुर सम्बन्धों पर अधिक बल देती हैं।

3.7 प्रेमी–प्रमिका

मैत्रेयी पुष्पा के उपन्यासों में नारी विभिन्न भूमिकाओं में साक्षीकृत हुई है। कहीं माँ के रूप में, तो कहीं बेटी के रूप में, कहीं बहन की भूमिका में उसे खड़ा किया गया है तो कही पत्नी की भूमिका में, कहीं सास–बहू की भूमिका में प्रस्तुत हुई स्त्रियाँ हैं तो कहीं आदर्श–जोड़ी, समर्पित प्रेमिका के साथ–साथ विद्रोहिणी नारी भी मौजूद है। देवरानी–जिठानी, ननद–भाभी, सेविका–सखी और इसी तरह के

---

187 मैत्रेयी पुष्पा, त्रिया–हठ (नयी दिल्ली : किताबघर प्रकाशन, 2010), पृ. 23

किसी न किसी पारिवारिक संदर्भों से जुड़ी हुई हैं। इनके उपन्यासों में नारी चाहे जिस भूमिका में प्रस्तुत की गयी हो किन्तु अन्ततः वह विभिन्न पीड़ाओं–यातनाओं को झेलती हुई एक संघर्षमयी नारी है। नई चुनौतियों को स्वीकार करने वाली नारी है। नई राह बनाने वाली नारी है। इस दृष्टि से 'चाक' की सारंग, 'इदन्नमम' की मन्दा, कस्तूरी कुण्डल बसै, की कस्तूरी, 'विजन' की डॉ0 आभा, 'अल्मा कबूतरी' की अल्मा, भूरीबाई एवं कदमबाई आदि स्त्रियों का संघर्ष उपन्यास के अन्य स्त्री–पात्रों को ही नहीं बल्कि सम्पूर्ण स्त्री–जगत को प्रेरणा एवं संघर्ष का संबल प्रदान करता है।

मैत्रेयी पुष्पा के उपन्यासों में चित्रित नारी सिर्फ हिन्दुस्तानी औरत नहीं है, अपितु वैश्विक स्तर पर अपने अस्तित्व के लिए संघर्षरत स्त्री है। इनके सम्पूर्ण औपन्यासिक कृतित्व के आधार पर कह सकते है कि उनकी नारी अपने सम्पूर्ण अस्तित्व की पुनर्खोज में संघर्षरत स्त्री है। आत्मपरीक्षण करने वाली स्त्री है। पुरूष से दो टूक विमर्श करने वाली स्त्री हैं आत्मध्वंस के लिए आकुल स्त्री नहीं, अपितु आत्मनिर्माण के लिए पुलकित स्त्री हैं पुरूष के वर्चस्व में आच्छादित वह स्त्री है, जो वहाँ से निकलकर स्वतन्त्र आकाश की तलाश में है। इनके उपन्यासों में स्त्री के अर्थ को समझाने की कोशिश की गयी है। शिक्षा, राजनीति, परिवार, समाज, मित्र तथा शेष दूसरे जीवन संबंधी सरोकार इस कृति में जुड़ते–मिटते और खण्डित होते दिखलाई पड़ते है।

मैत्रेयी पुष्पा ने अपने उपन्यासों में ब्राह्मणवादी–सामन्तवादी, पूँजीवादी, बौद्धक– सांसकृतिक रचनाओं के परिवर्तनकारी, प्रतिरोध के लिए वंचित उत्पीड़ित समूहों–आदिवासी दलित, पिछड़ी जाति की स्त्रियों के पोटेंशल को उन्मुक्त और सक्रिय करने पर बल दिया है। मैत्रेयी पुष्पा के यहाँ स्त्री का संघर्ष एकांगी नहीं है। एक ओर वह अपनी अलग अस्मिता के लिए संघर्षरत है तो दूसरी और अपनी सामाजिक धवल छवि पर भी दाग नहीं लगने देना चाहती। व्यक्ति और समाज, परिवार और अस्तित्व के उपकूलों में बहने वाली स्त्री संघर्ष की सरिता आवेग की लहरों सें भरी है, जिसे निम्न उपशीर्षकों के अंतर्गत रखकर देखा जा सकता है।

3.8 ग्रामीण समाज में पर्दाप्रथा

अपने देश में महिलाओं को पर्दे में रखने का रिवाज है। इसके पीछे का कारण शायद ही कोई स्पष्ट कर पाये फिर भी ये सवाल तो कौंधता ही है कि आखिर क्यों ? मनुष्यों में समान होने के बावजूद भी महिलाओ को ढककर या छिपाकर रखने के पीछे का क्या कारण हो सकता है ? ये सवाल हमारे समाज में अक्सर ही किया जाता रहा है, कुछ विद्वानों का मानना है कि पर्दा प्रथा समाज के लिये बहुत ही आवश्यक है इसके पीछे के कारण के बारे में उनका कहना है कि इस प्रथा से पुरूष कामुकता को वश में किया जा सकता है। लेकिन इस जवाब के संदर्भ में ये सवाल भी खड़ा होता है कि क्या पुरूष की कामुकता इतनी बढ़ गयी है कि उसे अपने ही समकक्ष महिला साथी को कैदियों की तरह रखना पड़ रहा है? तो क्या ये माना जाये कि पर्दा प्रथा से दुराचार रोका जा सकता है ? जहाँ तक मेरा मानना है कि ऐसा सोचना व्यर्थ ही होगा क्योंकि दुनियां में जितने भी गलत काम होते हैं वे चोरी छिपे ही होते हैं। तो इस परिपेक्ष्य में ऐसा सोचना मुर्खता मात्र ही होगा। तन ढकने या पर्दा करने से पुरूषों की या किसी अन्य की प्रवृत्ति या सोच पर अंकुश लगाया जा सकता है? शायद आपका जवाब नहीं होगा। आपको ये जानकर हैरानी होगी जिन देशों, प्रदेशों या जातियों में पर्दा प्रथा की प्रचलन ज्यादा है वहाँ दुराचार जैसे मामलें सबसे ज्यादा प्रकाश में आते है। इससे ये बात तो साफ हो जाती है कि दुराचार रोकने के मामले में पर्दे का रिवाज का कोई संबंध नहीं है। आज समाज को जरुरत तन को ढकने की नहीं मन को ढकने की जरुरत ज्यादा है। फिर भी कुछ लोग अनाचार की रोकथाम के लिए पर्दा प्रथा को जरुरी समझते है तो इस व्यवस्था को नर पर लागू करने की जरुरत ज्यादा है क्योंकि नारी की अपेक्षा नर ज्यादा उच्छंखल होता है। नारी की अपेक्षा पुरुष ज्यादा स्वछंद घूमता है ऐसी दशा में उसके पतित होने की आशंका ज्यादा है। महिलाएं तो ज्यादातर घरेलू कामों में व्यस्त रहती हैं और घर में ही रहती हैं, पुरुष काम के चलते बाहर होते हैं इसलिए पर्दे की जरुरत उन्हें ज्यादा है।

इस प्रथा के चलते हम अपने प्रिय संबंधिनी को बेहद निरीह स्थिति में ढकेल देते हैं जिससे वह अपनी योग्यता, क्षमता और के वजूद को भी खो देती है। प्रतिभा संपन्न होने के बावजूद वह नारी अपने परिवार के लिए व अपने हित के लिए कुछ भी नहीं कर पाती और आज की भारभूत स्थिति में अपंग मात्र ही बनकर रह गयी

है। इस बात को जितनी जल्दी गंभीरतापूर्वक सोचा जाए जाएगा उतना ही स्पष्ट होता जाएगा कि इस पर्दा प्रथा कुछ और नहीं अपनी कुल्हाणी से अपने ही पैरों को अनवरत रूप से काटने चले जाना है। आज जब हम प्रगति पथ पर बढ रहे हैं, देश विकास कर रहा है ऐसी स्थिति में पर्दा जैसी विडंबनाओ को अपनाने का आग्रह करना, जोर देने का मतलब समझ ही नहीं आता। कारण चाहे जो भी हो इस प्रथा से स्त्री अपने क्षमता को खोती है तथा वह खुद को असहाय समझने लगती है तथा खुद को कायर, निर्बल और भीरूता की कतार में खड़ी पाती है। पर्दे में रखकर उसे कमजोर और अविश्वशनीय होने का अहसास कराया जाता है। पर्दा प्रथा हमारे देश या संस्कृति में कभी भी प्रचलित नहीं रही है। प्राचीनकाल में स्त्रियां सभी क्षेत्रों में काम करती थी और उन्हें विद्याध्ययन योग्यता अभिवर्धन और अपनी प्रतिभा से समाज को लाभ पहुंचाने की खुली छूट थी, उन्हें कहीं किसी प्रतिबंध में नहीं रहना पड़ता था। भारत में पर्दा प्रथा का आगमन विदेशी आक्रमणकारियों के साथ हुआ। सर्वविदित है कि पर्दा प्रथा पहले मुस्लिम दशों मे शरू हुआ था। इस घातक परंपरा को समूल नष्ट करने के लिए किसी स्त्री का घूंघट खुलवा देना पर्दा न करने के लिए तैयार कर देना भर पर्याप्त नहीं है। कितना अच्छा होत कि वर्तमान भारत का समाज अपने घरों के अन्दर से इस बनावटी परदा को हटा कर उस भीषण भूल का प्रतिरोध करे, जिसके कारण हमारे घर ही देवियां एक न एक रोग से पीड़ित रहती हैं। घर के बाहर की दुनियां से अनजान रहकर घूटती रहती हैं।

कितने ही लोगों का भ्रम अब भी नहीं मिटा कि परदा छोड देने से स्त्रियां स्वतंत्र हो जाती हैं, किंतु यह उनका भ्रम ही नहीं अंधविश्वास है। गुजरात महाराष्ट्र, मद्रास की स्त्रियों ने परदा न कर कौन से शील धर्म को नष्ट किया है ? वरन यों कहिए कि भारत के नारी धर्म का वास्तविक मान आन इन्ही प्रान्तों ने रख लिया, आज स्त्री अपरहण, बलात्कार की जितनी घटनाएं अपने देश मे घटित होती है क्या उनसे शतांश घटनाएं परदा हटाने वाले देशों में हुआ है। नारी का शोषण उन प्रदेशों में ज्यादा हो रहा है जहां परदा प्रथा हो धर्म तथा संस्कृति से जाड़कर जबरदस्ती इस कुप्रथा को थोपा जा रहा है। यह तो माना हुआ सिद्धांत है कि जो वस्तु जितनी छिपा कर रखी जाएगी बाहरी परिस्थियां उसे प्रकाश में लाने के लिए उतनी ही विशेष उत्कंठा दिखाएगी और भीतरी परिस्थिति उसे छिपाने के लिए

उतनी ही संकीर्ण और निर्बल होती रहेगी। ऐसे प्रथा के निर्वहन का बोझ हम अक्सर पुत्रवधू पर डालते हैं, हमे ध्यान रखना चाहिए कि पुत्रवधू बेटी के समान होती है। अब समय आ गया है जब पर्दा प्रथा जैसी कुरीति को हटाए जाए। नर और नारी दोनों एक ही मानव समाज के अभिन्न अंग है। दानो का कर्तव्य और एक हैं। नियत प्रतिबंध और कानून दानों के प्रति एक जैसे होने चाहिए। यदि पर्दा प्रथा शील सदाचार की रक्षा के लिए है तो उसे नर पर लागू किया जाना चाहिए क्योंकि दुंराचार में पुरूष हमेशा आगे रहता है। यदि यह पुरूष के लिए आवश्यक नही है तो नारी पर भी इस प्रकार का प्रतिबंध नहीं होना चाहिए अवांछनीय हैं। मेरा पर्दा प्रथा के विरोध करने का ये मतलब कतई नहीं है की असंगत कपड़े पहनने की छूट दी जाये।

वस्त्रेणेव वासया मन्मता शुचिम् ऋगवेद

हम उत्तम वस्त्र से गोपनीय अंगो को ढक देते हैं। जब पशु पक्षी पर्दा नहीं करते, मुंह नही ढकते उनमे ऐसी कोई प्रतिबद्धता नहीं है तो मानव में आजादी का हरण इस तरह क्यों हो रहा है?

3.9 दहेज प्रथा

वर्तमान में दहेज़ प्रथा एक अभिशाप बन चुकी है। पहले लोग अपनी बेटी के सुखी जीवन यापन के लिए यथा–योग्य समाग्री देकर उसे विदा करते थे, किन्तु आज इसका स्वरूप ही बदल गया है। आज इसका स्थान प्रतिस्पर्धा और लालच ने ले लिया है। इसके पूर्व व वर्तमान स्वरूप पर प्रकाश डालते हुए राजेश रानी ने कहा है, ''दहेज़ पहले एक रस्म थी जिसे माता–पिता उपहारस्वरूप अपने सामर्थ्य के अनुसार अपनी बेटी को देते थे लेकिन आज यह मजबूरी बन गई है। व्यक्ति अपने को ऊँचा दिखाने के चक्कर में अधिक से अधिक दहेज़ देता है। भले ही इस अंधी दौड़ में स्वयं को विजयी दिखाने के लिए कर्जदार भी क्यों न बनना पड़े।''[188] स्पष्ट होता है कि पहले माता–पिता अपनी बेटी के खुशहाल भविष्य के लिए उसे अपनी योग्यतानुसार सामग्री देते थे, परन्तु आजकल लोगों ने इसे अपने सम्मान से जोड़ दिया है। उन्हें लगता है कि अगर वे अपनी बेटी को ज्यादा व महंगी चीज़ें न

188 राजेश रानी, हिन्दी उपन्यासों में सामाजिक चेतना (दिल्ली : के. के. पब्लिकेशन्स), पृ. 61

देंगे, तो इससे उनकी बेइज्जती होगी और लड़के वाले भी नाराज होंगे। यही कारण है कि दहेज़ की समस्या को बढ़ाने में हमारी दिखावे की प्रवृत्ति भी जिम्मेदार है। इस समस्या को दूर करने के लिए कड़े कानून भी बनाए गए हैं, परन्तु उनको भी नजर अंदाज कर दिया जाता है। कन्या भ्रूण हत्या एवं बेमेल विवाह भी इसी का परिणाम है। दहेज़ प्रथा के कारण ही लड़कियों के जन्म पर शोक मनाया जाता है। कई बार तो उन्हें जन्म से पहले ही मार दिया जाता है। वर्तमान समय में इसने विकराल रूप धारण कर लिया है। एक ओर लड़की वाले अपनी बेटी के सुखी जीवन के लिए उसे जितना हो सकता है उतना देने की कोशिश करते हैं, दूसरी ओर लड़के वालों को जितना दिया जाए वही कम लगता है। वर पक्ष वाले कानून के डर से खुलकर अपनी मांगे नहीं रख पाते हैं और शादी के बाद लड़की को ससुराल वाले बात–बात पर ताने मारते हैं, उसे मानसिक तौर पर प्रताड़ित करते हैं। मैत्रेयी पुष्पा ने अपने उपन्यासों में दहेज़ प्रथा की समस्या को चित्रित किया है।

'इदन्नमम' उपन्यास में मैत्रेयी पुष्पा ने दहेज़ की समस्या को कुसुमा नामक पात्रा के माध्यम से व्यक्त किया है। कुसुमा की शादी सम्पन्न घर में यशपाल से हुई है, लेकिन वह दूसरी शादी कर लेता है, क्योंकि कुसुमा के घरवाले गरीब थे। वह लड़की वालों से जो चाहता था, वे उसे दे न पाए। कुसुमा अपनी शादी की बर्बादी का कारण अपने पति की दूसरी बीबी को न मानते हुए कहती है, ''खोट तो हमारे मतारी–बाप का था। वे गरीब काहे को थे? गरीब थे तो अपनी बिटिया के लिए सुख के सपने काहे देखे? सपने देखे ही थे तो मान प्रतिष्ठा वाले घर के लिए उतना दहेज़ काहे नहीं जुटा पाए? काहे नहीं कर पाए घर–वर की इच्छा पूरन?''[189] इस प्रकार स्पष्ट होता है कि कुसुमा का पति उसके मायकेवालों से दहेज़ चाहता था, लेकिन जब उसके घरवाले उसे उसके मनमुताबिक नहीं दे पाते, तो वह अपनी पत्नी को अपनाता नहीं है और दूसरी शादी कर लेता है। दहेज़ ही कुसुमा की शादीशुदा ज़िन्दगी को बिखेरने का कारण बनता है।

'अगनपाखी' उपन्यास में भी दहेज़ की समस्या का चित्रण हुआ है। यहाँ पर लेखिका ने लड़कीवालों को भी दहेज़ को बढ़ावा देते हुए चित्रित किया है। दामिनी

---

189 मैत्रयी पुष्पा, इदन्नमम (नयी दिल्ली : राजकमल प्रकाशन, 1999), पृ. 100

नामक पात्र अपने पिता की प्रवृत्ति को स्पष्ट करती है, ''मेरे पिता को और क्या चाहिए था? जाति का लड़का, योग्य और नौकरीशुदा। सोने में सुहागा। वे अच्छे से अच्छा दहेज़ देने को तैयार हैं।''[190] इस प्रकार स्पष्ट होता है कि कई बार लड़की वाले भी दहेज़ को बढ़ावा देते हैं। कुछ सम्पन्न घर वाले लोग अपनी बेटी को बढ़ चढ़कर देते हैं, वह सोचते हैं उनकी बेटी को अच्छा घर मिल जाए इसके लिए वह कुछ भी देने को तैयार होते हैं। लड़की वालों की यह सोच दहेज़ प्रथा को बढ़ावा देती है। लड़की के सुखी भविष्य की कामना करना गलत नहीं है लेकिन दहेज़ को बढ़ावा देना बहुत गलत है। अमीर लोग तो अपनी बेटी को दहेज़ दे सकते हैं, लेकिन गरीब लोग क्या करेंगे?

'विज़न' उपन्यास में भी लेखिका ने दहेज़ की समस्या का चित्रण किया है। इसमें आभा नामक पात्रा है, जो डॉक्टर है और एक सम्पन्न परिवार में पली–बड़ी है। आभा के पिता ने उसकी शादी धूमधाम से की और लड़के वालों की हर इच्छा को पूरा किया, लेकिन फिर भी आभा खुश नहीं है। वह दुखी मन से कराहते हुए कहती है, ''पापा, क्यों किया तुमने ऐसा? ऐसा किया है तो फिर ऐसा ही करते जाओ। यही तो विवाह की शर्त है कि बेटी जब तक जिन्दा रहे, जिंस तब तक चलती रहे। पापा ..... तुम शर्त निभाते जाओ, नही तो आभा यहां कैसे निभेगी?......

सर्दियों में मिठाइयाँ और गर्मियों में फलों की टोकरियाँ। मौसम के साथ मिजाज भी सधा रहे यह जरूरी था।..... मुकुल के घर रूपयों का वृक्ष लगा दिया पापा ने, वही वृक्ष विष फल देने लगा।''[191] स्पष्ट होता है कि आभा अपनी शादी से खुश नहीं है। उसके पिता ने अपनी बेटी को सबकुछ दिया, लेकिन वह ससुराल में निभा नहीं पाई। मैत्रेयी पुष्पा ने यहां पर स्पष्ट किया है कि जो लोग अपनी बेटी की खुशियाँ पैसों के बल पर या दहेज़ देकर खरीदना चाहते हैं, वह गलत है। यहां पर लेखिका ने पाठक वर्ग में यह चेतना लाने का प्रयास किया है कि दहेज़ देकर या लेकर खुशी जीवन नहीं मिलता है। यह तो मनुष्य की गलत सोच है। बच्चों के सुखी जीवन में मदद करनी चाहिए, लेकिन दहेज़ देकर कदापि नहीं।

---

190 मैत्रयी पुष्पा, अगनपाखी (नयी दिल्ली : वाणीप्रकाशन, 2001), पृ. 147
191 मैत्रयी पुष्पा, विज़न (नयी दिल्ली : वाणी प्रकाशन, 2002), पृ. 105

'बेतवा बहती रही' उपन्यास में मैत्रेयी पुष्पा ने गरीब माँ–बाप को दहेज़ की चिन्ता में चिन्तित होते हुए चित्रित किया है। यहां पर उर्वशी के माता–पिता बेटी के विवाह में चिन्तित होते हुए हमारे समक्ष चित्रित होते हैं। वह सोचते हैं कि बेटी पराये घर की अमानत होती है। उसे जितने जल्दी हो उसके घर चले जाना चाहिए। उनका मानना है कि बेटी के माँ–बाप उसके पैदा होते ही दहेज़ जोड़ने लग पड़ते हैं। "उर्वशी के ब्याह का वजन उसके सीने पर भारी पत्थर–सा लदा था। उसके जन्म से ही ये ऋणी होने की अनुभूति से दबे थे। दहेज़ का ख्याल आते ही कंगाली और दारिद्र्य की खाई में जा गिरते। मन गहरे तल में डूब जाता।"[192] स्पष्ट होता है कि गरीब लोगों के घर लड़की का जन्म कितना कष्टदायक माना जाता है। यही कारण है कि बेटी के माता–पिता उसके जन्म पर ही दुःख में डूब जाते हैं। इसमें लेखिका ने उर्वशी के पिता के माध्यम से हर लड़की के पिता की मानसिक स्थिति को चित्रित है। जब तक समाज में दहेज़ की समस्या रहेगी, तब तक लड़कियाँ अपने माँ–बाप पर बोझ ही समझी जाएँगी।

'त्रिया–हठ' उपन्यास में भी दहेज़ की समस्या का चित्रण हुआ है। यहाँ पर देवेश नामक पात्र है, जो अपनी माँ की ज़िन्दगी के बारे में लोगों से पूछताछ करता है। बैरागी काका देवेश को बताते हैं कि गांव में यह बात फैली हुई थी कि तुम्हारे मामा अजीत अपनी बहन का ब्याह दहेज़ के कारण नहीं करवाते हैं। वह दहेज़ से बचने के लिए उसे कहीं बेच देना चाहते हैं। तब हमने भी यही समझा था, लेकिन अब समझ है कि दहेज़ से बेटी का सुख नहीं खरीदा जा सकता है। हो सकता है वह अपना पैसा बचा रहे हों। वैरागी काका अपनी बीवी की मिसाल देते हुए कहते हैं कि हमारी घरवाली अपने साथ बहुत सारा दहेज़ लेकर आई थी। मेरे बाप ने जो वह मोहरें लाई थी उन्हें बेचकर ज़मीन खरीद ली और अपने नाम करवा ली और उससे बांदी की तरह काम करवाते। "उसके मायके के धन से जमीन खरीदी और उससे बांदी की तरह काम लेने लगे। बस, एक दिन पनइयाँ लेकर वह भी खड़ी हो गई। सीधे ललकारा– 'आओ मेरे सामने, बताऊँ तुम्हारी औकात'।"[193] यहाँ स्पष्ट

---

192 मैत्रयी पुष्पा, बेतवा बहती रही (नयी दिल्ली : किताबघर प्रकाशन, 2010), पृ. 25
193 मैत्रयी पुष्पा, त्रिया–हठ (नयी दिल्ली : किताबघर प्रकाशन, 2010), पृ. 64

होता है कि दहेज़ से लड़की के जीवन में खुशी नहीं आ सकती और न ही ससुराल वाले खुश रह सकते हैं।

'गुनाह–बेगुनाह' उपन्यास में भी दहेज़ की समस्या का चित्रण हुआ है। यहाँ पर दहेज़ के लिए बाप को कर्ज लेते हुए चित्रित किया है। यहाँ पर दिखाया गया है कि दहेज़ के कारण ही बेटियों के जन्म से लोग कोसों दूर भागने लगते हैं।

अतः कहा जा सकता है कि मैत्रेयी पुष्पा ने अपने उपन्यासों में दहेज़ की समस्या का विभिन्न रूपों में चित्रण किया है। उनका मानना है कि दहेज़ से न तो लड़की सुखी होती है और न ही लड़के वाले। यह एक ऐसी समस्या है जिसके कारण दोनों परिवार हमेशा आपस में झगड़ते रहते हैं। यह प्रथा भारतीय समाज के लिए कलंक है। इस कुप्रथा के परिणामस्वरूप पारिवारिक एवं सामाजिक सम्बन्धों में दरार पड़ जाती है। हम समाचार पत्रों में पढ़ते हैं कि दहेज़ के लालचियों ने अपनी बहू को मार दिया, जो कि हमारे समाज के लिए बहुत शर्मनाक बात है। इस समस्या को मैत्रेयी पुष्पा ने अपने उपन्यासों में उठाकर पाठक वर्ग को इसके प्रति चेताने का प्रयास किया है।

(ब) मैत्रेयीपुष्पा की कहानियों में अभिव्यक्त भारतीय ग्रामीण समाज

मैत्रेयी पुष्पा की कहानियों में भारतीय ग्रामीण समाज के विविध आयाम स्थापित है। बुन्देलखण्ड और ब्रज प्रदेश की मिट्टी की सौंधी गंध है। भाषा और मुहावरे भी मिट्टी की गंध समेटे है। उनके सम्पूर्ण कहानियों में लोक जीवन, लोक विश्वास, लोक अविश्वास, ज्योतिष, मूहुर्त तथा शकुन अपशकुन, लोक मान्यताएँ, लोक संस्कार, लोक मेले, उत्सव, त्योहार, लोकगीत, लोक कलाएँ, लोक रीति रिवाज, ग्रामीण आर्थिक संरचना, नारी संघर्ष, भाषा में आंचलिक मिठास व अनूठी नव्यता, स्थानीय राजनीति, नौटंकी, होली की रौनक और प्रतीक धर्मिता साकार हो उठी है। मैत्रेयी पुष्पा की कहानियों में स्त्री विमर्श तथा लोक जीवन की भीनी–भीनी खुशबू है। सम्पूर्ण कहानियों में समूचा उत्तर भारत बोल रहा है। राजेन्द यादव के शब्दों में, ''मैत्रेयी पुष्पा न वक्तव्य देती है न भाषण। वह पात्रों को उठाकर उनके जीवन और परिवेश को पूरी नाटकीयता में देखती है। .... मुहावरे दार जीवंत और खुरदरी लगने वाली भाषा की गवई ऊर्जा मैत्रेयी पुष्पा का ऐसा हथिया है जो हमें अपने समकालीन कथाकारों में सबसे विशिष्ट और अलग बनाती है।''

(क) भारतीय ग्रामीण समाज की वर्गीय स्थिति

मनुष्य एक सामाजिक प्राणी है समाज में रहने के नाते ऐसा नहीं होता है कि वह सामाजिक नियमों से प्रभावित हुये बगैर रह सकता हो अतः भारतीय समाज और विशेषतः ग्रामीण समाज प्रमुख रूप से जाति प्रधान समाज है। यहां सामाजिक स्तरीकरण प्रमुख आधार जाति प्रथा ही है। इस समय हमें देश में अनगिनत जातियाँ तथा उपजातियाँ है। प्रत्येक जाति की अपनी–अपनी विशेषताएँ हैं। वास्तव में जाति व्यवस्था केवल भारतीय समाज की उपज एवं अनुपम संस्था है। आज हमारा समाज लगभग तीन हजार जातियों एवं उपजातियों में विभाजित है और यह प्रथा केवल हिन्दुओं तक ही सीमित न होकर मुसलमान तथा ईसाइयों तक में भी कुछ सीमा तक प्रवेश कर गई है। जाति व्यवस्था का इतिहास हजारो वर्ष का है। वास्तव में भारतीय समाज में जाति प्रथा द्वारा अनेक कार्य सम्पन्न होते आये है और आज भी हो रहे है। अनेक दोषो के होते हुये भी आज जाति प्रथा का महत्व प्राचीनकाल से अब तक ग्रामीण एवं नगरीय भारतीय सामाजिक व्यवस्था में विशेष भूमिका निभाती रही है।

3.1 उच्च वर्ग एवं उच्चवर्गीय मनोवृत्ति

निम्न और उच्चवर्ग के लोग आवश्यकतानुसार भाषा का प्रयोग तोड़–मरोड़ कर करते हैं। वे उत्पीड़न, शोषण, जुल्म, तबाहों को सहन न करके तुरंत प्रतिरोध कर विद्रोह की स्थिति में आ जाते हैं। उच्च वर्ग की आभा पेशे से एक कौशल, समर्थवान डॉक्टर थीं, जो दिल्ली महानगर में उच्च वर्ग संस्कारों से पली बड़ी थी। उसकी शादी मध्यवर्ग छोटे शहर के कुशल डॉक्टर मुकुल से होती है। दोनों नौकरी करने के साथ खुशी से जी रहे थे। एक पिता दाम से दबाए, दूसरा हक की मार मारे। बूढों की दुनिया में आभा और मुकुल का हंस–युग्म लहुलुहान घायल हो रहा है।

‘‘बड़े बाप की बेटी हेकड़ी दिखाएगी और हम सहते जायेंगे? कितनी मिन्नतें कितनी विनती.... महारानी के कान पर जूँ तक नहीं रेंगी’’[194], मुकुल जो कुछ सपने में भी नहीं सोचते थे, गुस्से में वह कुछ भी कह गए हैं, आभा समझ रही थी। मुकुल तुम

194 मैत्रेयी पुष्पा, विजन, वाणी प्रकाशन, नई दिल्ली, 2002 पृ0 125

मेरी बात समझोगे कभी? बड़े बाप की बेटी होना गुनाह है? मैं क्या करूँ तुम्हारे हिस्से छोटा बाप आया। प्लीज अण्डरस्टैंड माय प्लाइट (मेरी मुश्किल समझो) आभा का स्वर ऊँचा नहीं उठा। 'हाँ, यह क्यों नहीं कहती कि मेरे माँ–बाप का सम्मान करना तुम्हें भारी पड़ता है।' 'मुकुल, अपनी बात तुम कहो जैसे अपनी मुश्किल मैं कह रही हूँ पिता के पीछे छिपकर तीर चलाने से फायदा नहीं होगा। तुम अपने लोगों से बेजार हो, पत्नी को दबोचने लगे। ''मुकुल.... ऐसी उम्मीद हरगिज नहीं थी। नंबर वन का टैलेंट लेकर तुम घटियापन की बातें सोचते हो छिः''[195] यहाँ पति और सास ससुरों के दबाओं का तिरस्कार है।

मैत्रेयी पुष्पा स्त्री की भावना को आत्मसात कर लेती हैं तथा उच्च वर्ग के नियमों को तोड़कर स्त्री पर होने वाले अत्याचारों के विरूद्ध अपनी आवाज उठाती है।

3.2 मध्यवर्ग एवं मध्यवर्गीय मनोवृत्ति

मध्यवर्ग की नारी निम्नवर्ग की स्त्री जैसी खूँखार नहीं होती है। पुरूष रचित सामाजिक मूल्यों को, परंपराओं को संस्कारों का निर्वाह करती है। मध्यवर्ग की स्त्रियाँ यातनाएँ, जुल्म, शोषण सहते हुए भी सामाजिक संस्कार, परंपराओं को नहीं तोड़ पाती हैं। वह यथानुसार निर्णय लिये बिना ही उनके सारे निर्णय पुरूष हितों में तब्दील कर डालती हैं। 'विजन' की नेहा की माँ निम्न मध्य वर्ग की है तो नेहा के ससुरालवाले उच्च मध्यवर्ग के हैं। दोनों अपने जीवन में मन मार के जीने वाली स्त्रियाँ हैं। नेहा एक कुशलचिकित्सिका होने पर भी शादी के बाद पति प्यार तो करता है मगर डॉक्टर के रूप में निस्सत्त की स्थिति एकदम सुन्न जैसी है। वह अपने आप में ही सोचती रहती है अपने आप में बोलती रहती है किन्तु मुखर नहीं हो पाती।

नेहा के मन में आता, अजय से पूछे–''मैं राजा की रानी, फिर मेरी पदवी नीची कौन कर देता है? चोट इसलिए भी ज्यादा लगती है कि राजा के मुँह से दिलासा के दो शब्द तक नहीं निकल पाते। अजय ही मेरी जिन्दगी के दुखमय नाटक के नायक.... नेहा ने सोचा और अपनी हर आदत से, हर हरकत से, हर

---

195 मैत्रेयी पुष्पा, विजन, वाणी प्रकाशन, नई दिल्ली, 2002 पृ0 123

संकेत से पति को दोषी ठहराया। अब की बार भी खरखराते गले से बोली, 'ज्यादा शहादत न दिखाया करो। डोंट बी अ मार्टियर' कहते हुए होठों में ऐंठन सी पड़ी, अजय ने देख लिया.... चुप रह नहीं पाई मुँह से निकाल बैठी 'तुम्हारे पापा पर मुझे तरस आता है। सच अ हेल्पलैस मैन'.... 'पापा की बात छोड़ो नेहा। मैं तो जानता हूँ कि तुम कितनी सधी हुई सर्जन हो।..... डॉक्टर नेहा खत्म होती जाती जा रही है अजय.... आजिज दिखाकर आज ही देर मत कर डालो प्रेम की इतनी समझ! मगर प्रेम का साहस नहीं। साहस की कमी से प्रेम क्या, संसार भी खत्म हो जाये अजय। ....कॉन्फ्रेंस में जाकर मूड बदला जा सकता है, जीवन का ढर्रा नहीं''[196] लेखिका पात्रानुकूल भाषा का प्रयोग करती है शहरी, वैज्ञानिक मध्यवर्गी लोगों की भाषा को उसीरूप में अभिव्यक्ति करती हैं। मैत्रेयी पुष्पा अपनी कहानियाँ 'बोझ' और 'तुम किसकी हो बिन्नी' में भी शहरी मध्यवर्ग की ही भाषा पात्रों के अनुकूल प्रयोग करती है जैसे कि पति–पत्नी दोनों नौकरी करते हैं बच्चों की देखभाल के लिए उनको क्रैशर में डालते हैं तो बच्चे आपस में रोते एक दूसरे से बातें कर रहे हैं। बहुत ही प्यारी और तोतली भाषा इसका वर्णन इस प्रकार किया गया है–

''डबडबाई आँखों से ही उसने पूछा, तुम्हाला नाम क्या है? परछान्त.... अरून. .... छिन्हा।' बोलने में सुबकियाँ व्यवधान डाल रहीं थीं, गोलू का बताया पूरा नाम अक्षय की समझ में नहीं आया। 'औ.... तुम्हारा'? 'अच्छय' 'बस अच्छय' 'मेरा तो कितना बुरा नाम। परछान्त अरून छिन्हा' नाम बताते समय गोलू ने अपनी दोनों नन्ही बाँहे हवा में पसार दीं, 'इत्ता बरा' आखों में झिलमिलाते बिन्दुओं के साथ दाँतों की दूधिया पाँत मकई के दानों की तरह खिल पड़ी। अक्षय ने हाथ बढ़ाया, ''हाथ मिलाओ फ्लैंड।''[197]

'तुम किसकी हो बिन्नी' कहानी में भी शहरी मध्यवर्ग की भाषा का पात्रानुकूल उपयोग किया है। मिसेस आरती गुप्ता को तीसरी बार भी बेटी होती है। वह होश में आती है नर्स उन्हें बधाई देती है उसकी प्रतिक्रिया का वर्णन लेखिका एकदम सटीक भाषा में वर्णन करती हैं कि–

---

196 विजन – मैत्रेयी पुष्पा वाणी प्रकाशन, नई दिल्ली, 2002 – पृष्ठ 24

197 विजन – मैत्रेयी पुष्पा वाणी प्रकाशन, नई दिल्ली, 2002 – पृष्ठ 27

"अब तीन वे यथार्थ की पहली सीढ़ी पर कदम रखते ही चीख उठीं 'नहीं ऽऽऽ ई.... नहीं ऽऽ' क्या हुआ आपको आरती क्या कर रही हैं आप? देखो, रूको हाथ–पाँव मत मारो, स्टिच टूट जाएगा! तेज ब्लीडिंग हो जाएगा। ज्यादा खून गिरना अच्छा नहीं– 'हेवी–ब्लीडिंग इज वेरी डेंजरस' नर्स समझाने लगी पर कहाँ सुना मम्मी ने। गिरजी के रोगी की तरह हाथ–पाँव अकड़ा दिये और सचमुच खून की तेज धार बही, बिस्तर पर लाल पोखर–सी भर उठी। डॉक्टर! डॉक्टर! बेड नं 6 नर्स बच्चे को गोद में संभाले ही डा. भार्गव के पास दौड़ी"[198]

यहाँ भाषा पात्र और परिवेश के अनुसार है।

3.3 निम्नवर्ग और निम्नवर्गीय मनोवृत्ति

निम्नवर्ग की स्त्री की भाषा के बारे में अनामिका इस प्रकार स्पष्ट करती हैं कि "एक बड़ी चुपचाप सी सहमति सबके मन में इस बात को लेकर बन गयी स्त्री दिखती है कि बोलती सिर्फ दूसरे–तीसरे दर्जे की स्त्रियाँ हैं क्योंकि बोलने की जरूरत ही सिर्फ उन्हें पड़ती है जिनकी रूमानियत भरी रहस्यमयी चुप्पी का घेरा लोगों का ध्यान खींचने में समर्थ नहीं हो पाता। यानी कि एक खास तरह की कमी एक खास तरह का खोट, एक खास तरह की अतृप्ति जो Castration complex से भी नीचे की चीज है, उन्हें बोलने को विवश करती है। पद्रमिनी नायिका को बोलने की क्या जरूरत। भट्टिनी को बोलने की क्या जरूरत। बोलती है निऊनियाएँ, प्रौढ़ाएँ, वेश्याएँ, विषकन्याएँ, रणचण्डियाँ और दासियाँ जिन बेचारियों का बोले बिना काम नहीं चलता। और जो भाषा वे बोलती हैं चटक, पुष्ट, जीवंत और धारदार–उसमें लोकजीवन अपनी पूरी ऊर्जस्विता और बाँकपन के साथ, अपने सब रंगों में सहज उजागर होता है।"[199] ऐसे लोगों के लिए ठेठ भाषा का प्रयोगबहुत बड़ा रोल अदा करती है।

मैत्रेयी पुष्पा भी बुन्देलखंड तथा ब्रजक्षेत्र की बोलियों की विशेषज्ञ तथा सिद्धहस्त प्रयोक्ता हैं। सादगी और सरलता उनकी भाषा की प्राण सखियाँ हैं। इनकी अधिकांश नारियाँ मध्यवर्ग या निम्न मध्यवर्ग की होती हैं। जो वे गाँव की ठेठ भाषा बोलती हैं। गाँव–घर की भाभियों, चाचियों, बुआओं की गालियाँ, उलाहने,

198 विजन – मैत्रेयी पुष्पा वाणी प्रकाशन, नई दिल्ली, 2002 – पृष्ठ 32

199 स्त्रीवादी विमर्श : समाज और साहित्य – क्षमा शर्मा – पृष्ठ 46

कहावतें, किस्से, गीत, पहेलियाँ और ताने भाषा से एक ऐसी जोरदार होली खेलती हैं कि 'धोबिनिया धोये आधी रात' वाला आलम हो जाता है। 'मन नाँहि दस–बीस' कहानी में बेटा नपुंसक होकर बच्चे नहीं हुए तो सास ने बहु चंदना को दोष देती है तो चंदना सास को ही बेटा के बारे में नामर्द दोष देती है इस प्रसंग की भाषा इस प्रकार है–

"हमारे ही करम खोटे थे सो ब्याह लाएं छिनाल को। सास की कर्कश वाणी सुनकर मैं सन्न रह गयी। रोष पर वश नहीं रहा मेरा। मैं काँप उठी थी। क्रोध से मुट्ठियाँ भिंचने लगीं और एक साँस में ही सत्य को उगल बैठी–अपने पुत्र के विषय में आप सब अच्छी तरह जानते हैं। फिर भी मुझपर तोहमत! है पिता बनने योग्य आपका पुत्र? मैं सास के समक्ष खड़ी पूछ रही थी। रंडी, हमारे लड़के को नपुंसक बताती है। घाट–घाट का पानी पीकर सती–सावित्री बन रही है। जा उसी यार के पास, मर्द तो वह है। सास क्रोध का लावा उगल रही थी।"[200]

मैत्रेयी पुष्पा जनजातियों की तीखी भाषा का भी प्रयोग करती हैं। मैत्रेयी पुष्पा जनजाती स्त्री का क्रोध, यातना और घृणा को आत्मसात कर लेती हैं। मध्यवर्ग के संस्कारों को तोड़कर स्त्री पर होनेवाले अत्याचारों के विरूद्ध बोल उठती है।

(ख) भारतीय ग्रामीण समाज में नारी की स्थिति

मैत्रेयी पुष्पा ने ग्रामीण तथा शहरी जीवन परिवेश की पृष्ठभूमि में अच्छी संख्या में कहानियाँ लिखी हैं। इन कहानियों में स्त्री तथा पुरुष पात्र जो समाज के प्रत्येक वर्ग से सम्बन्धित हैं प्रयुक्त हुए हैं, लेकिन मुख्य चरित्र के रूप में प्रमुखतः स्त्री पात्र हैं जो अपनी विविध समस्याओं के साथ प्रस्तुत किए गए हैं और अपने अस्तित्त्व, अपनी आजादी तथा अमानवीय शोषण के विरूद्ध संघर्षरत देखे जा सकते हैं। स्त्री पात्र शिक्षित, अर्द्धशिक्षित तथा निरक्षर तीनों कोटि के हैं। इन्हीं अनेक स्त्री चरित्रों के माध्यम से मैत्रेयी पुष्पा ने स्त्री विमर्श से सम्बन्धित धारणा, चिन्तन और मान्यताओं को अभिव्यक्त किया है। आपकी कहानियों के सन्दर्भ में स्त्री विमर्श का अध्ययन अग्रलिखित शीर्षकों के अन्तर्गत प्रस्तुत है :–

3.1 प्रेम व दाम्पत्य जीवन

---

200 चिह्नार – मैत्रेयी पुष्पा – 'मन नाहिं दस–बीस' कहानी – पृष्ठ 352

पितृसत्तात्मक परिवार व्यवस्था और इस व्यवस्था के भेदभावपूर्ण मानदण्डों का आज की शिक्षित तथा जागरूक स्त्री विरोध करने लगी है। अब वह स्वयं को उपभोग की वस्तु मात्र न मानकर इंसान मानने लगी है, ऐसा इंसान जो दुःख की स्थिति में दूसरों की सहायता कर सके। दूसरों को सहारा दे सके। अहंकारी पुरुष नारी की सहृदयता और पर–दुःख कातरता में भी जब खोट देखने लगता है, तो दाम्पत्य जीवन की शांति भंग होना स्वाभाविक है। आज के भौतिकतावादी युग में आर्थिक अभाव भी बहुत बड़ी सीमा तक दाम्पत्य को कलह और क्रोध से भरने में सहायक बन रहा है। मैत्रेयी पुष्पा की अनेक कहानियों में दाम्पत्य जीवन की विसंगतियों की अभिव्यक्ति हुई है। 'गोमा हँसती है' कहानी का बलीसिंह गोमा के प्रति आकर्षित होता है, क्योंकि उसका पति किड्डा कुरुप है। धतूरा मिलाकर बनाई गयी रोटियाँ खिलाकर किड्डा बलीसिंह को मारने का उपक्रम करता है, लेकिन सब कुछ देखती हुई गोमा पसीजती नहीं। 'रायप्रवीण' कहानी की सावित्री गाँव की निरीह जनता को भूख से बचाने के लिए अपने शरीर का सौदा करती है, पति को सन्देह होना स्वाभाविक है, ऐसी ही परिस्थितियाँ परिवार की शान्ति के लिए घातक होती है। सावित्री पति के सन्देह के फलस्वरूप सामान्य स्थिति में नहीं है। मैत्रेयी पुष्पा सावित्री की मनोदशा का चित्रण इन शब्दों में करती है–**"तीसरे दिन शांत मन लौटी तो पति नहीं, राक्षस खड़ा था सामने। पकड़कर लात–घूँसों से पीटा। घसीट–घसीटकर पटका, जैसे यह करना उसके लिए जरूरी हो कि दिखा रहा हो कि लोगों, इस पापिष्ठा औरत को पति होने के नाते मैं क्या–क्या सजा दे सकता हूँ।"**[201] इस कदर मार–पीट और सावित्री का स्वयं नफरत से भर जाना दाम्पत्य को नरक से बदतर बना देता है।

दाम्पत्य में अशान्ति और कलह के कारण अनेक हैं। स्त्रियों के सन्दर्भ में विवाह से पूर्व के प्रेम सम्बन्ध तथा विवाहेत्तर प्रेम सम्बन्ध, स्त्री की सन्तान को जन्म देने की असमर्थता तथा स्त्रियों द्वारा किया जाने वाला स्त्रियों का शोषण। मैत्रेयी पुष्पा की कहानियों में शोषण के ये सभी रूप विद्यमान हैं। इस दृष्टि से आपकी 'मन नाहीं दस बीस', 'राय प्रवीण', 'उज्रदारी', 'गोमा हँसती है', 'बहेलिए', 'भंवर',

---

201 गोमा हँसती है – मैत्रेयी पुष्पा – 'राय प्रवीण' कहानी – पृष्ठ 53

'ताला खुला है पापा', 'तुम किसकी हो बिन्नी', 'बारहवीं रात', 'सहचर' तथा 'साँप सीढ़ी', 'अपना–अपना आकाश', 'सफर के बीच' तथा 'चिह्नार' कहानियाँ उल्लेखनीय हैं।

प्रसंगानुसार यह उल्लेख किया जा चुका है कि सन्तान को जन्म न दे पाने का सारा दोष स्त्री पर मढ़ा जाता है और उसका बहुविध शोषण किया जाता है। सास यह जानकर कि सन्तान न होने के लिए दोषी उसका बेटा ही है फिर वह भड़ास बहू पर ही निकालती है। 'मन नाहीं दस–बीस' कहानी की चन्दना नए जमाने की बहू है, जो सास के सामने प्रश्न करने की हिम्मत जुटाती है और कहती है–**"अपने पुत्र के विषय में आप सब अच्छी तरह जानते हैं। फिर भी मुझ पर तोहमत! है पिता बनने योग्य आपका पुत्र? मैं सास के सम्मुख खड़ी पूछ रही थी।"**[202] स्त्री द्वारा, स्त्री का शोषण कैसे किया जाता है, उस दृष्टि से भी आलोच्य कहानी महत्त्वपूर्ण है क्योंकि अपने बेटे का खोट जानते हुए भी सास, बहू चन्दना से कहती है–**"रंडी हमारे बच्चे को नपुंसक बताती है! घाट–घाट का पानी पीकर सती–सावित्री बन रही है! जा उसी यार के पास, मरद तो वह है।"**[203] स्त्री द्वारा किया जाने वाला स्त्री का शोषण भी दाम्पत्य में क्लेश तथा घर में अशान्ति का कारण बनता है। स्त्री द्वारा स्त्री का शोषण करने में माँ, सास, भाभी, जेठानी तथा ननद मुख्य हैं और इनमें माँ को छोड़कर सब स्त्रियाँ विवाहिता के परिवार की ही होती हैं। बेटी का शोषण करने वाली माँ प्रमुखतः परम्परावादी पितृसत्तात्मक समाज की मान्यताओं व मूल्यों में ढली माँ ही हो सकती है, जो अपनी बेटी की पढ़ाई, खानपान, पहनावा तथा इधर–उधर आने–जाने पर नज़र रखकर बेटी को प्रताड़ित करती है। जिन माताओं की बेटियाँ ब्याह होने के उपरान्त दुराचार का आरोप लगने पर ससुराल से भागकर मायके आ जाती है उन्हें भी माँ अत्यधिक प्रताड़ित और शोषित करती हैं। 'बारहवीं रात' कहानी की सीता सास के द्वारा किए जाने वाले उत्पीड़न के फलस्वरूप मर जाती है। सास कितनी निर्दयी और क्रूर थी, इसका परिचय पाठकों को सीता के ससुर के इस कथन से मिलता है–**"बहू की खातिर दो पइसा खर्च कर दिए तो आसमान उठा लिया सिर पर! कि तुम माल–मिठाई उड़वा**

---

202 चिह्नार – मैत्रेयी पुष्पा – 'मन नाहिं दस–बीस' कहानी – पृष्ठ 781

203 चिह्नार – मैत्रेयी पुष्पा – 'मन नाहिं दस–बीस' कहानी – पृष्ठ 781

रहे हो बहू को, दूधन–अस्नान करा रहे हो! ऐसा किया होता तो अभागिन का गरभ न गिरता। पहला गरभ खंडित हुआ औरतें उसे भरपेट रोटी तक नहीं दे रही थीं, साली कर्कशा!"[204]

पितृसत्तात्मक समाज व्यवस्था में पुरुष की सत्ता के चलते स्त्री के साथ निरन्तर अन्याय होता रहा और इस परम्परा में रची–बसी प्रौढ़ायें और वृद्धाएँ जो माँ या सास, जेठानी जिस रूप में भी रहीं, उन्होंने बहुओं का बहुविध शोषण कर परिवार को अशान्ति और क्लेश मुक्त होने का अवसर ही नहीं दिया।

स्त्री द्वारा किया जाने वाला स्त्री का शोषण आज रूप बदलता नज़र आ रहा है और आज की शिक्षित और प्रायः आर्थिक रूप से अपने पैरों पर खड़ी बहुएँ, जो एकल परिवार में रहती हैं, पति को सर्वथा अपने कब्जे में कर सास की खबर लेने लगी हैं। सास को अपने एकल परिवार से दूर रखने के लिए ये शिक्षित बहुएँ अनेक पैंतरे बदलती हैं और चालें चलती हैं। 'साँप–सीढ़ी' कहानी की सुमन पति के माध्यम से सास–ससुर को मानसिक रूप से सताती रहती है। सुरजन सिंह का बेटा राजन रेलवे में नौकरी पाने के लिए घूस देने के इरादे से बाप से कुछ लाख रूपये माँगता है। पुरानी परम्परा तथा विचारों में ढल चुके मेहनती पिता घूस देकर नौकरी पाने को बेइमानी मानते हैं, जबकि राजन और उसकी पत्नी सुमन जानते हैं कि नौकरी मिलने के बाद उनके जीवन के ठाट–बाट ही बदल जाएँगे। खेतों को बेचकर या गिरवी रखकर घूस के लिए पैसा देना राजन के पिता की नजरों में सर्वथा अनुचित है। वह बेटे से कहते हैं–**"यह क्यों नहीं कहता कि दाऊ, हम घर–खेतों को लूटकर गाँव मिटाने पर तुले हैं। मैं अपनी गलतियाँ बार–बार खोजता हूँ राजन, पढ़ाकर गलती की? तुझे सभ्य–शिक्षित बनाने की लालसा ही आज डसने लगी सुरजनसिंह के बाप–दादों तक को।"**[205]

इस प्रकार मैत्रेयी पुष्पा की कहानियाँ प्रमाणित करती हैं कि उन्होंने पितृसत्तात्मक परिवार तथा समाज को बड़े करीब से और बारीकी से देखा और समझा है, जहाँ नारी के शोषण के एक नहीं, अनेक चक्र चल रहे हैं।

3.2 अनमेल विवाह एवं बाल विवाह

---

204 गोमा हँसती है – मैत्रेयी पुष्पा – 'बारहवीं रात' कहानी – पृष्ठ 158
205 गोमा हँसती है – मैत्रेयी पुष्पा – 'बारहवीं रात' कहानी – पृष्ठ 106

समाज और सामाजिक परिवर्तनों पर साहित्यकार निरन्तर नज़र रखते हैं और उनकी सूक्ष्मग्राही नजर वस्तुस्थिति के यथार्थ को पकड़ने तथा समाज पर पड़ने वाले उसके प्रभावों को उजागर करने का प्रयास करती है। पूँजीवादी अर्थव्यवस्था के चलते समाज में हुए स्त्री शोषण पर अनेक महिला कथाकारों की दृष्टि पड़ी है और उन्होंने अपने–अपने ढंग से उसे अभिव्यक्त किया। भारतीय नारी अन्य अनेक प्रकार के शोषण के अतिरिक्त आर्थिक शोषण की मार भी सहती रही है।

कथाकार मैत्रेयी पुष्पा ने अपनी 'बहेलिए', 'ललमनियाँ', 'पगला गई है भागवती', 'रिजक' तथा 'उज्रदारी' कहानियों में स्त्री के आर्थिक शोषण का प्रभावशाली चित्रण किया है। मैत्रेयी पुष्पा की कहानियों में नारी के आर्थिक शोषण के कारणों में मुख्य है–

पुरुष वर्चस्व। इसके अतिरिक्त नारी का अशिक्षित होना, आर्थिक रूप से अपने पैरों पर खड़ा न होना, विधवा होना तथा स्वाभाविक मान–मर्यादा के चलते अपने पैतृक काम से मुँह मोड़ लेना आदि हैं। विधवा स्त्रियाँ यदि सन्तानहीन हैं तो परिवार के मुखिया उसे अधिक से अधिक कष्ट देते हैं, बन्धुआ की तरह काम लेते हैं, बन्धनों में रखते हैं और उसके अतिशीघ्र मरने की प्रतीक्षा करते हैं, ताकि उससे सम्बन्धित सम्पत्ति हड़प सकें।

'बहेलिए' कहानी के गिरिजा के चाचा अपनी भतीजियों का अनमेल विवाह कर माँ को लाचार भी बना देते हैं और गिरिजा के पेशकार पति की मदद से गिरिजा के पिता की जमीन अपने बेटे के नाम करा लेते हैं। एक दुर्घटना में अपने पेशकार पति की मृत्यु हो जाने के बाद गिरिजा ने माँ को फिर चाचा के घर नहीं जाने दिया, यह मानकर कि **"माँ के लिए वहाँ धरा भी क्या था। सूरज (मृत पति का बेटा) भी उसी के पास आ गया। यह तो अच्छा था कि पेशकार की खेती पहले से ही अलग थी वरना...वह, माँ और सूरज...क्या होता उनका?"**[206] पेशकार की जमीन पहले से अलग न होती तो पेशकार के भाई उसे हड़पने में भी देर न करते। एक विधवा माँ, दूसरी स्वयं विधवा और एक छोटा बच्चा धन की होड़ में अन्धे बने परिवारजनों का क्या बिगाड़ लेते भला।

---

206 ललमनियाँ – मैत्रेयी पुष्पा – 'ललमनियाँ' कहानी – पृष्ठ 150

मैत्रेयी पुष्पा की दो कहानियाँ 'ललमनियाँ' तथा 'रिजक' का सम्बन्ध स्त्री के पैतृक व्यवसाय से है, जिसे अपनाए हुए ये स्त्रियाँ खाती–पीती और सुखपूर्वक जीवनयापन करती हैं, लेकिन इनके अपने घर–परिवार तथा समाज के चलते ज्यों ही इन्हें अपना व्यवसाय छोड़ना पड़ा है, दो जून की रोटी के लाले पड़ जाते हैं और बच्चे रोते–बिलखते रहते हैं। 'ललमनियाँ' कहानी की मौहरों को ब्रज क्षेत्र में विवाह के अवसर पर आयोजित किए जाने वाले लोकनृत्य ललमनियाँ में महारत प्राप्त है और उससे उसे धन और सम्मान दोनों मिलता था, लेकिन उसके प्रदर्शन को तुच्छ मानकर उसे छोड़ना पड़ता है।

वह मौहरों को एक बेटी भी दे चुका है। ललमनियाँ नृत्य बन्द करते ही मौहरों आर्थिक रूप से विपन्न हो जाती है और अपना तथा अपने बच्चे को पालना दूभर हो जाता है। लम्बे समय तक ललमनियाँ छोड़ चुकी मौहरों एक बार अपनी साबो जीजी के बुलावे पर उसकी बेटी के ब्याह में ललमनियाँ प्रस्तुत करने जाती है तो वह यह देखकर आश्चर्यचकित हो जाती है कि उसकी जीजी की बेटी को ब्याहने आ रहा उसका पति जोगेस है। मौहरों को यह जानकारी उसकी बेटी पिड़कुल देती है। वह माँ से कहती है–

"हमारे बाबू दूल्हे बने हैं अम्मा!

"हंस–मोहर पर बैठे हैं! बच्ची ताली पीटकर हँसने लगी।"[207]

पति के दबाव, डाँट–फटकार के चलते ललमनियाँ छोड़कर आर्थिक रूप से विपन्न मौहरों अपनी जीजी के घर से भी लज्जित होकर लौटती है। 'रिजक' कहानी की लल्लन अपनी सास के जचगी के पेशे को बड़े कौशल के साथ सीख लेती है। सास के अनुभव का लाभ उठाकर वह उनसे भी अधिक नाम कमाती है। उसके पास अपने परिश्रम के चलते अन्न और धन की कोई कमी नहीं होती। लल्लन वसोर जाति की है और नयी रोशनी के चलते उसके जाति के लोग जचगी के काम को गन्दे काम की दृष्टि से देखने लगे हैं, जिसके फलस्वरूप वह जचगी के काम पर जाना बन्द कर देती है। एक तो पति को हवालात से न छुड़ा पाने की समस्या से वह परेशान है और अब पेशा छोड़ देने पर आर्थिक स्थिति बहुत बिगड़

---

207 ललमनियाँ – मैत्रेयी पुष्पा – 'रिजक' कहानी – पृष्ठ 150

गई है, बच्चे भूखे मरने लगे हैं। अनेक घरों की गर्भवती स्त्रियाँ प्रजनन के समय काल कवलित हो चुकी हैं, जिनके मरने का लल्लन को बहुत दुःख होता है और वह स्वयं को भी अपराधी मानती है। उसकी सास ने उसे सीख दी थी कि उसे किसी प्रकार का भेदभाव किए बिना अपना काम पूरी ईमानदारी और मेहनत के साथ करना चाहिए। ऐसा करने पर उसके पास किसी चीज की कमी नहीं रहेगी और बरकत भी होगी। आर्थिक विपन्नता से छुटकारा पाने के इरादे से वह अपने जातीय बन्धनों की परवाह न कर एक बार फिर से जचगी का काम करने लगती है। जितने समय तक उसने जचगी का काम बन्द किया था उसे याद कर लल्लन व्याकुल हो जाती है। **"अपने करे का मलाल है उसे। कैसे भूल गई कि बिना काम करे कोई हक नहीं बनता। क्यों आसाराम की डग पर ही डग धरती चली गई फिर? अपने किसब के साथ बेईमानी क्यों बरती? कलेजे में उमड़ती दया–माया भी सुखा डाली। वह खुद से ही हिसाब माँग रही है आज। मास्टर जी की बहू माफ करेगी उसे? बहू मछली–सी छटपटाती रही। मास्टरनी हाथ जोड़ती रही, हा–हा खाती रही, समझाती रही, "बेटी जिंदगानी से बड़ी नहीं होती कोई बिरादरी। तेरी बिरादरी से तेरे बदले की माफी मैं माँग लूँगी, भरे पंचों में। तू चल तो सही। मोंठ के सेन्टर तक ले जाने की हालियत में नहीं है बहू 33।"**[208] मैत्रेयी पुष्पा की कहानियों में लल्लन जैसे स्त्री पात्र हैं, जो सामाजिक शोषण की परवाह न कर मानवता की रक्षा के लिए बिरादरी के दबाव को ठुकरा कर वही करते हैं जो सत्य है, धर्म के अनुकूल है और इंसानियत है।

3.3 विधवा समस्या

मैत्रेयी लिखती हैं कि **"परिवार समाज की महत्त्वपपूर्ण इकाई है। वह इसलिए कि मर्द की मुखियागिरी के लिए ऐसा पहला सिंहासन है जिस पर आसीन होते हुए उसकी ताजपोशी को मान्यता मिलती है और इसका कमजोर होना या गिरना समाज के पहले खम्भे का गिरना है, जो किसी तरह बर्दाश्त नहीं किया जाता। यदि ऐसा होता है तो स्खलन की जिम्मेदार स्त्री ही मानी जाती है।"**[209] ताजपोशी हुई नहीं कि पुरुष को नारी शोषण के अनेक अधिकार प्राप्त हो जाते हैं। पुरुष स्त्री को

---

208 ललमनियाँ – मैत्रेयी पुष्पा – 'ललमनियाँ' कहानी – पृष्ठ 150

209 सुनो मालिक सुनो – मैत्रेयी पुष्पा – पृष्ठ 69

लिंग भेद के कारण अपनी तुलना में हेय मानता है। वह स्त्री को भ्रूण हत्या के लिए बाध्य कर सकता है; पुरुष ही 'कौन पढ़ेगा कौन नहीं' इसका निश्चय करता है। पुत्र–पुत्री में भेद करता है, पुरुष ही तय करता है कि कन्या का विवाह किससे होगा, यौन सुख के नाम पर वह यौन शोषण करता है, स्त्री के बाँझ होने की स्थिति में नारी के जीवन को नरक बना देने का निर्णय लेता है। बलात्कार की स्थिति में पुरुष का न्यायालय स्त्री को ही दोषी बताता है और दंडित करता है। यदि दुर्भाग्यवश कोई स्त्री विधवा हो जाती है तो परिवार का मुखिया पुरुष उसके लिए अमानवीय यातनाओं की घोषणा कर उसके जीवन को नरक से भी बदतर बनाने में कोई कसर नहीं छोड़ता तथा धर्म की दुहाई देकर विधवा विवाह को अधर्म घोषित कर देता है।

स्त्री को पितृसत्ता सदैव यह समझाती रही है कि स्त्री को त्यागशील और पतिव्रता होना चाहिए, इसी में उसके जीवन की सार्थकता है। अतः यह कहना अनुचित न होगा कि नारी जीवन की प्रायः सभी समस्याओं का मूल स्रोत पितृसत्तात्मक परिवार ही रहा है। इस परिवार व्यवस्था के नियम, मान्यताएँ, कानून तथा चिन्तन मात्र स्त्री को अनुकूलित करने के लिए हैं। पितृसत्तात्मक परिवार व्यवस्था में किस प्रकार नारी को जन्म से ही निकृष्ट माना जाता है, इस सत्य को मैत्रेयी पुष्पा ने अपनी 'पगला गई है भागवती' कहानी में चित्रित किया है, जहाँ एक माँ कन्या के जन्म और तत्काल उसके मर जाने पर प्रसन्न होती है, लेकिन अपनी बहन भागवती के उसे जीवित बताए जाने पर अत्यधिक दुःखी हो जाती है। भागवती की जिज्जी ने जिस बच्ची को जन्म दिया वह अनुसूइया है, जिसका पालन–पोषण वही करती है। भागवती जिज्जी से कहती–**"जिज्जी, ओ जिज्जी! मरी नहीं है बिटिया! तेरौ कौल, जिन्दी है! फिंकवा न दिओ।**[210] पुरुष प्रधान सत्ता किस प्रकार भ्रूण हत्या कराती है, इसका उदाहरण मैत्रेयी पुष्पा की कहानी 'तुम किसकी हो बिन्नी' की माँ आरती है जो पुत्र जन्म के मोह में अपनी कितनी ही बेटियों की भ्रूण में हत्या करा चुकी है। अपने ग्रन्थ 'स्त्रीत्त्ववादी विमर्श' में क्षमा शर्मा ने पुरुष की कन्या से मुक्ति पाने की आज उपलब्ध सुविधा की ओर संकेत करते हुए लिखा है

---

210 ललमनियाँ – मैत्रेयी पुष्पा – 'पगला गई है भागवती' कहानी – पृष्ठ 99

कि **"जो लोग कहते हैं कि देखो विज्ञान ने क्या कर दिया? गर्भ में लड़कियों को मारने के लिए अमीनों सेंटेसिस और अल्ट्रासाउंड का तोहफा दे दिया। हम सब जानते हैं कि ये दोनों खोजें गर्भस्थ शिशु में जेनेटिक खराबी का पता लगाने के लिए की गई थी। लेकिन मेल आडंबरवाली सोसाइटी ने इसे लड़कियों को मारने वाला अस्त्र बना लिया।"**[211] पुत्र के मोह में अन्धी बनी 'तुम किसकी हो बिन्नी' कहानी की सुशिक्षिता आरती अपनी अनेक बेटियों की भ्रूण हत्या करा देती है जिसका पता बिन्नी को अपनी बुआ से चलता है। माँ के अस्पताल ले जाने पर बिन्नी बुआ से पूछती है क्या हुआ, तो वह कहती है–**"पेट में ही मार डाला तेरी बहन को, और क्या हुआ। एक बार नहीं, दूसरी बार, तीसरी बार, तेरी बहनें..." मार डाली'।"**[212]

आज तो भ्रूण हत्या आम बात हो गयी है। कन्या के जन्म और बाद के दायित्त्वों से छुटकारा पाने के अचूक अस्त्र के रूप में संयुक्त परिवारों और एकल परिवारों में इस अमानवीय कृत्य के घिनौने आचरण की बात सुनने को मिलती रहती है। स्त्री की इस दुर्दशा के लिए स्त्री ही दोषी है, खासतौर से वह स्त्री को पितृसत्तात्मक परिवार व्यवस्था की पोषक बन चुकी है और इसी व्यवस्था को स्त्री के लिए उपयुक्त मानती है। पुत्री यदि न चाहते हुए भी जन्म ले ही लेती है तो फिर उसके स्वास्थ्य और शिक्षा को लेकर लिंगभेद का नाग उसे डसने को उतावला बैठा रहता है। पितृसत्तात्मक परिवार व्यवस्था पुत्री को सदैव पराया धन मानती रही है।

परिवार के स्तर पर मैत्रेयी पुष्पा की स्त्री जब ब्याह कर ससुराल में आती है, तब से परिवार के मुखिया पुरुष के इशारे पर नाचती हुई यह भी भूल जाती है कि वह भी कोई इंसान है। 'बेटी' कहानी की मुन्नी पढ़ना चाहती है और बार–बार कहती है कि मेरे भाई पढ़ रहे हैं तो मैं भी पढ़ूंगी। इस पर माँ उससे कहती है–**"चुप होती है कि नहीं? बहुत जबान चल गयी है तेरी। तू लड़कों की बराबरी करती है बेटे बुढ़ापे की लाठी है हमारी, हमें सहारा देंगे तू पराए घर का दलिद्दर। तेरी कमाई नहीं खानी हमें ...कह दिया, कान खोलकर सुन ले।"**[213] ससुराल में स्त्री

---

211 स्त्रीवादी विमर्श : समाज और साहित्य – क्षमा शर्मा – पृष्ठ 46

212 ललमनियाँ – मैत्रेयी पुष्पा – 'तुम किसकी हो बिन्नी' कहानी – पृष्ठ 122

213 चिह्लार – मैत्रेयी पुष्पा – 'बेटी' कहानी – पृष्ठ 82

की मान–मर्यादा कोई माने नहीं रखती और न कोई इस बात की चिन्ता करता है कि परिवार की सदस्य बहुएँ भी इंसान हैं। 'रास' कहानी के ससुर के व्यभिचार की शिकार जैमन्ती मायके आने पर माँ की फटकार सुनती है। माँ बेटी की भर्त्सना करती है, क्योंकि माँ पितृसत्तात्मक परिवार व्यवस्था की पोषक है और चाहती है कि घर–परिवार में चाहें जो हो जाय उसे ढक–छोंपकर रखना चाहिए। माँ कहती है–**"वो मरद–मानस की जात, रोक–बाँध तो करता ही। ऊपर से सतवन्ती बनने का सौक चढ़ा था तुझे। अरे, घर की बात घर में ही दब जाती। भरी थारी में लात मारकर आई है। हमारे बुढ़ापे में ख़ाक डालने। रमला के संग चली जा सूधी। चाचा हैं, माफी माँग लेंगे।"**[214] परिवार का मुखिया पुरुष बलात्कार भी करता है तो सभी कुछ उसे बचाने की दृष्टि से ही किया जाता है। यहाँ एक बार फिर स्त्री ही स्त्री की दुश्मन के रूप में आती है जो ससुराल से बलात्कार के फलस्वरूप पीड़ित होकर मायके आई अपनी बेटी को ही फटकार लगती रहती है। यह प्रवृत्ति नारी शोषण के लिए उत्प्रेरक का काम करने वाली है। पितृसत्तात्मक परिवार व्यवस्था के अन्तर्गत जी रही स्त्री की समस्याएँ एक–दो नहीं अनेक हैं। वह अपनी इच्छा से कुछ नहीं कर सकती। आर्थिक रूप से पराश्रित है और परिवार के नियमों और व्यवस्थाओं का पालन किसी भी कीमत पर करना ही है। वह पुरुष के अहं का शिकार होती है, सन्देह का शिकार होती है। स्त्री यदि वयोवृद्धा माँ है तो बेटे भी उसकी उपेक्षा करते है। पशुवत् जीवन बिताती चली आ रही भारत के परिवारों की स्त्रियाँ अब जागने लगी हैं और संघर्ष करने का निश्चय कर मानवोचित आत्मसम्मान की प्राप्ति को अपना लक्ष्य बना चुकी हैं। मैत्रेयी पुष्पा की कहानियों की स्त्रियाँ जागरूक और संघर्षशील हैं और अपनी राह बनाने में संलग्न हैं।

3.4 वासना का शिकार एवं विद्रोही स्वभाव

उन ही कहानियों में आर्थिक परम्पराओं का चित्रण है, जिनमें पारिवारिक तथा समााजिक, परम्पराओं का चित्रण हुआ है। इन्हीं परम्पराओं के चलते स्त्री का आर्थिक शोषण हुआ है। आर्थिक परम्पराओं के अन्तर्गत मैत्रेयी पुष्पा की कहानियाँ प्रमुख रूप से भाई की विधवा के हिस्से की जमीन अपने नाम कर लेने सम्बन्धी

---

214 गोमा हँसती है – मैत्रेयी पुष्पा – 'रास' कहानी – पृष्ठ 146

घटनाएँ ही अधिक हैं। विधवा भाभी या बहू के अतिरिक्त पिता के उत्तराधिकारी बच्चे भी हैं तो परिवार का मुखिया उन्हें भी भू–सम्पत्ति से बेदखल कर देता है। अशिक्षित स्त्रियाँ अथवा वृद्धायें पुरुष की चालाकी नहीं समझ पाती, लेकिन आज की स्त्री अपने हक को लेकर बहुत कुछ जाग चुकी है। 'उज्रदारी' कहानी की शांति अपने बेटे के हिस्से की जमीन को हड़पने की अपने जेठ की चाल को समझ जाती है और सतर्क हो जाती है। वह एक साथ बहुत–सी बातें सोचने लगी है, कभी अलग छप्पर डालकर रहने की भी सोचती है, लेकिन फिर सोचती है–**"अलग छप्पर डाल भी लूँगी, तब क्या इनकी मातहत न रहूँगी? इनके शिकंजे से निकलने में तो कई जन्म निकल जायेंगे। शादी–ब्याह की हथकड़ी बातों से कट जाती और आजाद होकर मर्द की तरह जी सकती औरत। फिर आज लड़ाई ही किस बात की थी।"**[215] अपने जेठ और उनके बेटे द्वारा माँ–बेटे को जिन्दा गाड़ देने के इरादे को भाँपकर वह प्रधान के आगे सर्वस्व समर्पित कर देती है। प्रधान युवा है झिझकता है तब शान्ति कहती है–

"नादान! फाटक जड़े चौक में दबोच भी लेता तो कौन रोकने वाला था तुझे? यह भी क्या पता कि प्रधानिन का डर न होता तो मैं ही...बाँध उखड़ा जा रहा था। बरसों–बरसों का बाँध....आगा–पीछा भूल गई मैं.... ।"[216]

इस प्रकार शांति ने एक तो लम्बे अर्से बाद वासना की भूख बेधड़क होकर बुझाई और प्रधान का साथ पाकर उसने उज्रदारी की अर्जी लगा दी। 'छुटकारा' कहानी की सफाई कर्मी छन्नो अपना काम ईमानदारी और मेहनत से करने के कारण आर्थिक रूप से विपन्न नहीं है और कुसुमी की अम्मा उसके सामने प्रस्ताव रखती है कि वह अपना घर बेच रही है और उसे खरीदकर छन्नो उसी मुहल्ले में रह सकती है, जहाँ काम करती है। कुसुमी की अम्मा के घर में घुसकर बदमाश उसकी बेटी के जेवर उतार ले गए थे और उन्होंने मारपीट भी की थी। **"कुसुमी की अम्मा कहती थी कि वह बदमाशों को पहचान गई है। इसलिए उसकी जान को खतरा है, अब वह घर बेचकर बेटी कुसुमी के पास जाना चाहती है। सो अरज की**

---

215 गोमा हँसती है – मैत्रेयी पुष्पा – 'उज्रदारी' कहानी – पृष्ठ 118
216 गोमा हँसती है – मैत्रेयी पुष्पा – 'उज्रदारी' कहानी – पृष्ठ 131

थी कि छन्नो तेरे पास इन दिनों पइसा है और बावरी, जहाँ काम तहाँ ठाँव।"[217] गाँव–समाज के लोग यह तो चाहते ही थे कि छन्नो उनके बीच न बसे, साथ ही वे कुसुमी की अम्मा के मकान को भी बिकने नहीं देना चाहते थे, ताकि उसे वृद्धा की असमर्थता के चलते हड़पा जा सके। मुहल्ले में फ्लैश सिस्टम बन जाने पर छन्नो की आर्थिक स्थिति डगमगाने लगती है, क्योंकि उसका अर्थतंत्र उसकी मेहनत पर आधारित था।

'ललमनियाँ' शीर्षक कहानी की मौहरों की घर–गृहस्थी और अर्थतंत्र 'ललमनियाँ' नृत्य के सहारे चलता है। मौहरों का पति उसे नृत्य करने से रोकता है तो घर में सभी लोग और बच्चे भूख के मारे बिलबिलाने लगते हैं। घर में पति का शव पड़े होने के कारण वह ललमनियाँ करने सिमरधनी गाँव नहीं जा पाती, तब उसकी माँ उसके कान में कहती है–**"बेटी चुपके से ललमनियाँ कर आ। परोसा मिलेगा सो उसी परसाद के संग कई दिनों तक पानी पीते रहेंगे। हमारे यहाँ रोज–रोज खाना भी कौन धरने आएगा?"**[218] आर्थिक संकट गाँव का हो या शहर का, परम्पराओं की अनदेखी न करने से भूखे मरने की स्थिति आती है विशेषकर उन कलाकारों और मजदूरों के सम्मुख जो रोज कमाते और रोज खाते हैं। मौहरों की माँ बेटी से घर में शव रखे जाने के बावजूद ललमनियाँ करने जाने को कहती है अर्थात् परम्परा की परवाह न करने की बात कहती है ताकि घर के सदस्यों को भूख से मरने से बचाया जा सके। मैत्रेयी पुष्पा की 'पगला गई है भागवती' तथा 'बहेलिए' का सम्बन्ध भी आर्थिक समस्याओं के चित्रण से है, जहाँ स्त्री कमर कसकर इसका मुकाबला करती है। इसके लिए उसे परम्पराओं को तोड़ते कोई झिझक नहीं लगती।

3.5 सास–बहू

दहेज प्रथा भी पितृसत्तात्मक समाज के द्वारा निर्धारित पक्षपातपूर्ण मूल्यों और मान्यताओं का दुष्परिणाम है। इसके लिए भ्रष्ट समाज–व्यवस्था जिम्मेदार है। दहेज की बलि–वेदी पर कितनी ही निर्दोष युवतियाँ आहुति दे चुकी हैं, दे रही हैं और विगत सौ से भी अधिक वर्षों से इस मानवता विरोधी कुप्रथा के उन्मूलन के प्रयास

---

217 पियरी का सपना – मैत्रेयी पुष्पा – 'छुटकारा' कहानी – पृष्ठ 65

218 ललमनियाँ – मैत्रेयी पुष्पा – 'ललमनियाँ' कहानी – पृष्ठ 143

होते चले आ रहे हैं, परन्तु समाज है कि थोड़ा–बहुत घुमा–फिरा कर इसे बनाए हुए है। माता–पिता का बेटी को बोझ मानना दहेज प्रथा का भय ही है। दहेज कम लाने तथा आज के चलन के अनुसार अच्छे किस्म का न लाने पर ससुराल आते ही नवविवाहिता का उत्पीड़न और अपमान प्रारम्भ हो जाता है। माता–पिता को दी जाने वाली गालियों तथा अपमानपूर्ण कटूक्तियों के कारण कोमल हृदय युवतियाँ आत्महत्या की राह चुनने को बाध्य हो जाती हैं। दहेज प्रथा को लेकर मैत्रेयी पुष्पा ने कम ही कहानियाँ लिखी हैं और उनमें ग्रामीण परिवेश से सम्बन्धित कहानियाँ मुख्य हैं। 'बारहवीं रात' कहानी की सीता को पर्याप्त दहेज न लाने के कारण उसकी सास निरन्तर कष्ट देती है और ताने मारती है।

नवविवाहित युवक सुरेन्द्र की पत्नी मर जाती है। दहेज लेने के लिए दोषी न होते हुए भी उसका प्रति सुरेन्द्र दहेज हत्या के आरोप में जेल चला जाता है, जिसे छुड़ाने के पचास हजार रूपयों की आवश्यकता है। दहेज के लोभी माता–पिता सुरेन्द्र का पुनर्विवाह कराकर दहेज लेकर रकम जुटाना चाहते हैं, लेकिन ब्याह के लिए जिस लड़की की बात की जाती है वह जागरूक और समझदार तथा पढ़ी–लिखी है। वह दहेज देकर ब्याह नहीं करना चाहती। सुरेन्द्र के पिता अपनी पत्नी को बताते हैं धमना वाले रिश्ता नहीं करने वाले। **"सुरेन्द्र की अम्मा, होश में आओ। मालूम है, सन्देश किसका था? नाई कह रहा था कि क्या करें धमना वाले, उनकी बिटिया अड़ी है कि दद्दा, हमें कुँवारे रहना मंजूर है। कतल होने उनके घर नहीं.... ।"**[219]

वास्तव में विवाह योग्य युवतियों के जागने और दहेज प्रथा का विरोध करने पर ही यह कुप्रथा समाप्त हो सकती है, परन्तु ज्यों–ज्यों समाज शिक्षित और उन्नत होता जा रहा है दहेज का दानव और भी विकराल होता जा रहा है।

3.6 माता–पिता पुत्र

कहानियों तथा उपन्यासों में कुछेक को छोड़कर, अधिकांश कन्याओं का विवाह माता–पिता बेमन होकर तथा एक अनावश्यक बोझ उतार फेंकने के रूप में करते देखे जा सकते हैं। मैत्रेयी पुष्पा की कहानी 'गोमा हँसती है' की गोमा का

---

219 गोमा हँसती है – मैत्रेयी पुष्पा – 'बारहवीं रात' कहानी – पृष्ठ 165

विवाह उसके माता–पिता किड्डा उर्फ 'किरोड़ी सिंह' नाम के एक पुरुष से कर देते हैं और ऐसा करते हुए गोमा की इच्छा अनिच्छा का कोई ध्यान नहीं रखा जाता। विवाह के बाद गोमा भी अपना खेल खेलने लगती है। बातूनी गोमा किड्डा को भी खुश रखती है और अपने प्रेमी बली सिंह को भी। किड्डा एक बेटे भँवर का बाप भी है, लेकिन बलीसिंह का समय–बेसमय घर में आना–जाना देखकर किड्डा अपने बेटे को हरामी मानने लगता है। घर में बलीसिंह के आने का विरोध करते हुए गोमा से कहता है–**"वह मेरे घर आया तो सिर फोड़ डालूँगा कुतिया! इस हरामी को फेंक दूँगा गोद से उठाकर। उस भुजुंगी को देखकर खिलती है सूरजमुखी! मुझे देखकर तो तेरा मुँह तोरई की तरह लटक जाता है"**[220] बली सिंह, किड्डा की पत्नी का यौन शोषण कर रहा है, बल से नहीं आपसी समझौते से, लेकिन समाज व्यवस्था ऐसी है कि उस व्यभिचारी को दंडित करने का कोई विधान नहीं है। 'राय प्रवीण' कहानी के सावित्री के पिता अपनी बेटी को बिगड़ैल मानकर ब्याह करने से तंग आकर अपनी मृत पत्नी को पुकारते हैं। सावित्री के पिता कहते हैं**–"तुम जहाँ–कहीं हो, चली आओ। इस बिगड़ैल घोड़ी के मुँह में लगाम डालकर खींचो। घर के कोठे में बन्द कर दो और हर चौकस पहरेदारिन माँ की तरह–चौकीदारी करो। मैं तब तक लड़का खोज लूँगा इसके लिए। वहाँ बदचलनी करेगी तो अपने आप दागेगा।"**[221] यहाँ मात्र दो कहानियों में उदाहरण देकर यह सिद्ध करने का प्रयास किया गया है कि आज भी भारतीय पितृसत्तात्मक समाज में माता–पिता के लिए चाहे जैसे भी हो और जिस व्यक्ति से भी हो, बेटी का विवाह आनन–फानन में कर डालना समाज में अपनी प्रतिष्ठा बनाए रखने का ढोंग मात्र है। इस प्रकार पुत्री की इच्छा और उसकी उम्र का ध्यान रखे बिना किया जाने वाला ब्याह दहेज, बेमेल विवाह और विधवा समस्या का मूल कारण माना जाय तो अनुचित न होगा।

आर्थिक विपन्नता के अतिरिक्त पुत्री की निरन्तर बढ़ती उम्र तथा विवाह योग्य वर मिलने में विलम्ब, माता–पिता को सामाजिक प्रतिष्ठा के लिए ख़तरनाक लगने लगता है। और वे वर की उम्र का ध्यान रखे बिना और कम दहेज देकर या दहेज विहीन अथवा बेटी को बेचकर जैसी भी स्थिति बनती है, बेटी को दूसरे को सौंपने

---

220 गोमा हँसती है – मैत्रेयी पुष्पा – 'गोमा हँसती है' कहानी – पृष्ठ 174

221 गोमा हँसती है – मैत्रेयी पुष्पा – 'राय प्रवीण' कहानी – पृष्ठ 44

की जल्दबाजी में बेमेल विवाह कर डालते हैं। ऐसे बेमेल विवाह जिनके फलस्वरूप नवविवाहिताएँ जीवन पर्यन्त दुःख भोगती रही हैं, मैत्रेयी पुष्पा के उपन्यासों में ही नहीं, कहानियों में भी देखी जा सकती हैं। बेमेल विवाह के फलस्वरूप नवविवाहिताओं का असमय विधवा हो जाना, सन्तान को जन्म न दे पाना, यौन असन्तुष्टि की समस्या होना, पति–पत्नी में कलह होना तथा उनका अनेक प्रकार से शोषित होना जैसी समस्यायें उत्पन्न होती रहती हैं। ससुराल में निरन्तर मिलने वाली प्रताड़ना से मुक्ति के उद्देश्य से माता–पिता अपनी विधवा बेटियों को जब–तब विक्रय की वस्तु के रूप में इस्तेमाल करते हैं अथवा युवती विधवाएँ अपहरण व बलात्कार का शिकार बनती हैं। 'केतकी' कहानी का आर्थिक रूप से कमजोर पिता समाज की मान्यताओं की डर से अपनी बेटी केतकी का विवाह बेटी को प्रिय हरिजन युवक 'चन्दन' से नहीं कर सकते, परन्तु तीन बच्चों के पिता श्रीगोपाल के सम्मुख विवाह का प्रस्ताव रख देते हैं। उन्हें बेटी की खुशी की परवाह नहीं है, परवाह केवल वह है कि जैसे भी हो समाज में उनकी प्रतिष्ठा बनी रहे।

पितृसत्तात्मक समाज में विधवा स्त्री की बेटियों का विवाह करने की जिम्मेदारी निबाहने वाले परिवार के पुरुष सदस्य चाचा आदि समाज को दिखाने भर के लिए तो जिम्मेदारी निबाहने का ढोल पीटते हैं, लेकिन बेटी के समान अपनी भतीजियों के विवाह के लिए दहेज तथा अन्य प्रकार के फालतू खर्चों से बचने के लिए उनका विवाह वर की उम्र पर विचार न कर अधेड़ों से कर देते हैं। इतने पर ही उन्हें सन्तोष नहीं होता, वे लगे हाथ भाई की चल–अचल सम्पत्ति भी अपने अथवा अपने बेटों के नाम कर लेने का पुन्य भी हाथोंहाथ कर लेते हैं। मैत्रेयी पुष्पा की 'बहेलिए' कहानी की गिरिजा की माँ, गाँव की गँवार औरत तो थी, असहाय भी थी लेकिन कुछ न कर पाने की स्थिति में होते हुए भी वह अपनी बेटियों के अनमेल विवाह का विरोध अवश्य करती है। बड़ी बेटी क्षय रोगी से ब्याही जाकर मर चुकी है, छोटी बेटी गिरिजा का विवाह चाचा एक विधुर पेशकार से तय कर देते हैं। गिरिजा की माँ को जब यह पता चलता है तो वह फुँफकार उठती है कि–**"बाप की उम्र के आदमी से हमारी लड़की शादी तै करने वाले आप होते कौन हो"?**[222] यह

---

222 चिह्नार – मैत्रेयी पुष्पा – 'बहेलिए' कहानी – पृष्ठ 38

कहते हुए गिरजा की माँ खूब रोई–धोई और कोहराम भी खूब मचाया। बड़े–बूढ़े सबने उसकी बात सुनी और फिर उसे ही समझाया–**"काहे को रोती–पीटती है री बहू! काम की खोटी थी सो भोगना पड़ रहा है। पर इतनी सोच कि चाचा भतीजी का ब्याह कर रहा है! तू अकेली रांड–विधवा कैसे ब्याह–शादी करेगी? मरद की उमर नहीं देखी जाती री।"**[223] गिरिजा का विवाह हुआ और वह एक संयुक्त परिवार में जा पहुँची जहाँ वह परिवार के पुरुष सदस्यों के अत्याचार सहती रही, लेकिन परिवार के सदस्यों के स्वार्थी आचरण के प्रति पति को सावधान करती रही। दुर्भाग्य यह कि एक दुर्घटना में पति की मृत्यु का करारा आघात लगा। गिरिजा के जेठ–देवर सक्रिय हो गए, आत्मीयजन बन गए भाई के हिस्से की जमीन हड़पने के लिए, लेकिन मृत पति की खेती और जमीन पहले से ही अलग होने से गिरजा को अधिक असुविधा न हुई। गिरिजा मैत्रेयी पुष्पा की नायिका है, जो एक बार फिर से पढ़ाई शुरू करती है, स्त्री शोषण के विरूद्ध आवाज उठाने लगती है। वह आम स्त्रियों को शिक्षा का महत्त्व बताने लगी और अपने–पास ही नहीं दूर–दूर तक शोषित और पीड़ित स्त्रियों का जगाने का कार्य करने लगी। न्याय व्यवस्था तथा पुलिस में व्याप्त भ्रष्टाचार के चलते उनके नारी जागरण के मिशन को धक्के भी लगते रहे।

मैत्रेयी पुष्पा की और भी अनेक कहानियों के माता–पिता आर्थिक तंगी और उससे भी बढ़कर समाज में प्रतिष्ठा का ध्यान रखते हुए योग्य–अयोग्य, जैसा भी वर मिले, तत्काल बेटी का विवाह करना चाहते हैं। 'गोमा हँसती है' कहानी की गोमा का इसी तुफैल में अनमेल विवाह करने को माता–पिता राजी हो जाते हैं। गोमा की माँ अपने पति से कहती है–**"मैं मानती हूँ कि बेमेल रिश्ते की बात चलाई है मैंने, पर बैयरवानी हूँ, करमजली के लिए इतना तो कह ही सकती हूँ कि इस खूँटा बँध जाए। क्या मालुम कौन कसाई मोल देकर हाँक ले जाएगा? किड्डा जैसा हीरा फिर कहाँ मिलेगा?"**[224] यहाँ कलबतिया चाची किड्डा के बाप को समझा–बुझाकर गोमा को बोली लगने अर्थात् बिकने से बचा लेती है। वह किड्डा के बाप से कहती है–**"सोच–समझ लो बड़े। बली सिंह तैयार बैठा है। कहता था, दो–चार बीघा खेत**

---

223 चिह्नार – मैत्रेयी पुष्पा – 'बहेलिए' कहानी – पृष्ठ 38

224 चिह्नार – मैत्रेयी पुष्पा – 'बहेलिए' कहानी – पृष्ठ 38

निकाल दूँगा।"[225] जिन भी कारणों से रही हो पितृसत्तात्मक समाज में पुरुषों की सोच मानवतावादी मानदण्डों की कसौटी पर किसी कीमत पर खरी नहीं उतरती। क्षमा शर्मा अप्रत्यक्षतः बेमेल विवाह के लिए जिम्मेदार माता–पिताओं की ओर संकेत करती हुई लिखती हैं–**"लड़की के लिए एक मानक, लड़कों के लिए दूसरे मानक। लड़की बड़ी हुई तो प्रथम कर्त्तव्य यह कि उसे जैसे–तैसे योग्य–अयोग्य किसी भी लड़के के साथ के साथ धक्का दे दिया जाए, हो गया गंगास्नान, कन्यादान, छाती की चट्टानों का हटना। अब जिन्दगी भर पूजें एक मूर्ख को देवता मानकर।"**[226] समाज के बनाए ये दोहरे मानदण्ड पक्षपातपूर्ण तो हैं ही, बेमेल विवाह और दहेज प्रथा के लिए जिम्मेदार भी हैं।

3.7 प्रेमी–प्रेमिका

यहाँ स्त्री के सामाजिक जीवन से सम्बन्धित जिन मूल्यों और प्रश्नों की बात कही गई है, जागरूक स्त्री इनका विरोध क्यों कर करने लगी है, इस सम्बन्ध में सीमोन द बोउवार का मानना है कि **"यह तो पुरुष है जो सत्ता में रहने के कारण अपनी सुविधाओं को बनाए रखने के लिए मूल्यों की भिन्नता औरत पर थोपता है। पुरुष ने औरत के लिए एक दुनियाँ बनाने का अधिकार अपने पास रखा। उसने औरत की एक ऐसी अन्तर्वर्ती दुनियाँ बनाई, जिसमें उसको हमेशा के लिए कैद कर दिया, किन्तु कोई भी अस्तित्त्व सदा सीमाबद्ध नहीं रह सकता। समर्पिता होने के बावजूद औरत आज चाहती है कि वह इस जैविक मादा स्तर के ऊपर उठे, अपनी सीमाओं का अतिक्रमण करे।"**[227] यह बात सत्य है कि अपने अस्तित्त्व और अस्मिता को व्यक्ति अवश्य पहचानता है, भले ही परिस्थितियों की प्रतिकूलता के चलते इसमें समय अधिक लगे। आज के समय में स्त्री शिक्षा, व्यापक जागरूकता तथा संचार के बढ़ते प्रभाव के चलते स्त्री के लिए अपने अस्तित्त्व के महत्त्व को समझना अधिक सरल हो गया है। कन्या आज अपने विवाह, उपयुक्त विवाह, अपने अनुकूल वर के चयन, विवाह की उम्र, दहेज रहित विवाह आदि को लेकर पर्याप्त सचेत हो चुकी है

---

225 गोमा हँसती है – मैत्रेयी पुष्पा – 'गोमा हँसती है' कहानी – पृष्ठ 174

226 स्त्रीवादी विमर्श : समाज और साहित्य – क्षमा शर्मा – पृष्ठ 13

227 दि सेकिंड सेक्स – सीमोन दि बोउवार – अनुवाद डॉ0 प्रभा खेतान – 'स्त्री उपेक्षिता' – पृष्ठ 52

और यह सब उसे समाज में रहकर ही जानने का अवसर मिला है। कन्या का विवाह आज माता–पिता का एकाधिकार नहीं रहा। कन्या दहेज के लालची और दुर्व्यसनी तथा अशिक्षित वर को ठुकरा सकती है, उसके लिए अनमेल विवाह की सम्भावना शून्य हो चुकी है। आज स्त्री में इतनी चेतना तो आ ही गयी है कि विवाह को लेकर वह अपना भला–बुरा समझती है, अन्तर्जातीय विवाह से भी उसे परहेज नहीं रहा, बशर्ते कि वर उसकी अपनी कसौटी पर खरा उतरता हो।

'गोमा हँसती है' संग्रह की गोमा के आर्थिक रूप से विपन्न माता–पिता उसका विवाह कुरूप किड्डा से कर देते हैं। गोमा के अवैध सम्बन्ध बली सिंह से हैं, यह जानकर किड्डा क्रोध के मारे आपे से बाहर हो जाता, लेकिन चतुर तथा प्रेमी हृदय गोमा किड्डा को खुश कर लेती है। परम्परा विरोधी काम करते हुए भी वह सम्बन्धों के निर्वाह की कला तथा पति के स्वभाव को ठीक–ठीक पहचानती है। विवाह योग्य कन्या की इच्छा का ध्यान न रखने वाले माता–पिता अनुचित विवाह सम्बन्धों के लिए उत्तरदायी है। इसी स्थिति में कन्याएँ परम्परा का विरोध करती हैं। 'ताला खुला है' कहानी की 'बिन्दो' अपनी माँ से साफ शब्दों में कहती है–**"अम्मा, तुम मेरे ब्याह की फिकर बिलकुल न करना। जो रूपया खर्च कराएगा मैं उससे ब्याह नहीं करूँगी। ओरछा के मन्दिर में आदर्श विवाह होते हैं। वही करूँगी। ठीक है न?**[228] आज के युवक जो वास्तव में सच्चा प्यार करते हैं, अपने भविष्य के लिए उपयुक्त पत्नी चाहते हैं वे भी, परम्पराओं का विरोध करने के लिए युवतियों को जाग्रत करते हैं। 'ताला खुला है पापा' कहानी का अरविन्द, बिन्दो को जगाने के उद्देश्य से ही कहता है–**"बिन्दो, डरकर, बचकर चलने से बचाव तो हो जाएगा, लड़ाई जीतना असम्भव है।"**[229]

मैत्रेयी पुष्पा की 'गुनाहगार' कहानी की अवधबिहारी की पत्नी का बलात्कार उसका देवर तो करता ही है, साथ ही ऐसा करने के लिए अपने दोस्तों को भी लाता है। पत्नी, पति की नजरों से भी गिरती है और समाज की नज़रों से भी। अब उसके लिए जीने के दो रास्ते हैं या तो वह, वही करती रहे जो उसका देवर और उसके दोस्त कर रहे हैं या फिर अपने पर लगे आरोपों का विरोध करे। वह विरोध

228 गोमा हँसती है – मैत्रेयी पुष्पा – 'ताला खुला है पापा' कहानी – पृष्ठ 85–86
229 गोमा हँसती है – मैत्रेयी पुष्पा – 'ताला खुला है पापा' कहानी – पृष्ठ 89

का रास्ता चुनती है और अपने पति से कहती है–**"अवधबिहारी तुम बच्चा नहीं हो। समझते हो कि कोई औरत ऐसा क्यों करती है? ऐसा खतरनाक कदम क्यों उठाती है? नहीं, ऐसा करने पर वह बच नहीं सकती। मर्दों के नियम, उसकी मुकर्रर की कई सजाएँ कौन–सी औरत टाल पाई है?"**[230] वह आगे अपना इरादा भी बताती है–**"भाई है इसलिए इलजाम मुझे दे रहे हो। ठीक है तुम्हारे बस का नहीं है मुझे बचाना, मैं अपनी हिफाजत खुद कर लूँगी।"**[231] इस प्रकार अवधबिहारी की पत्नी स्त्री की मर्यादा के सारे मूल्यों को ताक पर रखकर अपनी काम–तुष्टि के अभाव की ओर संकेत करती है, जिसकी चाह में उसे सामाजिक मूल्यों की कोई परवाह नहीं है। इस प्रकार की स्थितियाँ भी युवती के विवाह के समय उसकी पसन्द–नापसन्द का ध्यान न रखने पर उत्पन्न होती है। जब पुरुष अपनी यौन सन्तुष्टि अवैध रूप से कर सकता है तो स्त्री क्यों नहीं।

3.8 ग्रामीण समाज में पर्दाप्रथा

पुरुष समाज और उसमें भी वे लोग जो पहले ही समाज के कर्त्ता–धर्ता बने चले आ रहे हैं, अपना वर्चस्व बनाए रखने के लिए प्रत्याशी का चयन अपनी इच्छा से करते हैं और चुनाव जितवा कर उसे मुट्ठी में कर लेते हैं। तब जैसे चाहें वैसे इस्तेमाल करते हैं, शोषण करते हैं। जब प्रत्याशी ही स्त्री हो तो फिर कहना ही क्या? 'चारों उगलियाँ घी में सिर कढ़ाई में।'

प्रधानी के चुनाव में प्रत्याशी के रूप में प्रीतमसिंह अपने सेवक कामता की पत्नी दुरगी को प्रत्याशी बनाने की सोचते हैं और कामता से कहते हैं कि इस बारे में अपनी पत्नी से पूछकर अभी बताओ। कामता ने दुरगी से पूछा तो वह कड़क होकर बोली– **"तुम ही चाँपो उनके चरन। चरनों पर मुंडी धरे रहो, तब भी तुमको वे ऊँचा आसन देने वाले नहीं। पुचकारेंगे, घुटियाएँगे, पर अपने समाज में शामिल नहीं करेंगे। उनके तो रीति ही ऐसी चली आ रही है कि पुकारो तो गालियाँ देकर, दुत्कारे तो गालियों के संग। हत्यारे एक–दूसरे को गरियाते भी हैं तो हमारी जाति को उघाड़ खोलकर धरते हैं। हमें अपनी औकात मालूम है। प्रधानी नहीं वे हमें फरेब देंगे। हमारी छीछालेदर कराएँगे। हमको फन्दा में अपनी घिची (गर्दन) नहीं**

230 पियरी का सपना – मैत्रेयी पुष्पा – 'गुनाहगार' कहानी – पृष्ठ 126
231 पियरी का सपना – मैत्रेयी पुष्पा – 'गुनाहगार' कहानी – पृष्ठ 126

डालनी।"[232] ये ग्रामीण स्त्रियाँ जानती हैं कि उच्च वर्ण के रसूखदार लोग किस प्रकार स्त्री को पैर की जूती समझते हैं और उसे शोषित तथा अपमानित करते हैं।

'सेंध' कहानी की कलावती भी स्त्री है, जो समाज कल्याण विभाग में नौकरी करते–करते बहुत कुछ सीख और देख लेती है। उसमें राजनीति के प्रति लगाव पैदा होने लगा तो विधायक (एम0एल0ए0) जी के साथ सभाओं में जाकर राजनीति का ज्ञान और भाषण देना सीख जाती है। विधायक जी पारखी तो थे ही, कलावती को नजदीक लाने के प्रयास में लग गए और उससे बोले–**"मैं नहीं चाहता कला कि तुम अपनी जिन्दगी कीचड़–माटी में गारद करती रहो। नगीने–सी काया धूल में अटी रहे।"**[233]

विधायक जी नौकरी–पेशा कलावती के लिए हर सुविधा जुटा देते हैं और शहर में रहकर गाँव की सेवा करने तथा गाँव से सम्बन्ध बनाए रखने की सलाह भी देते रहते हैं। कलावती है कि चुनाव में हार–जीत और हारने पर पैसा डूब जाने को लेकर घबराती है। विधायक जी उसे खूब समझाते हैं और चुनाव जीतने की चालें भी बताते हैं, लेकिन यह कभी नहीं कहते कि तुम बुद्धिमान और मेहनती स्त्री हो, चुनाव जीत जाओगी। विधायक जी पुरुष हैं, राजनीति से जुड़े पुरुष हैं, उन्हें कलावती को अपने साथ जोड़े रखना है, उसे कम अक्ल तथा अनुभवहीन बताते रहना है ताकि वह उसका शोषण कर सकें। विधायक जी, कला से कहते भी हैं–**"अपनी अकल मत लगाया करो कला। हम जो कहते हैं, करती जाओ। अब देखो तुम्हारे रहने के लिए गाँव में घर तक नहीं है–भाषण में जोर से कह सकती हो यह बात। ढहा पड़ा मलबा है तुम्हारी जगह। कमरा तो जनहित के लिए है।"**[234] इस प्रकार विधायक के रूप में राजनीति से जुड़ा पुरुष यहाँ भी स्त्री को अपने अधिकार में बनाए रखने का प्रयास करता है।

मैत्रेयी पुष्पा की 'पियरी का सपना' संग्रह की कहानियों 'मैंने महाभारत देखा था' तथा 'आरक्षित' कहानी में राजनीति में नारी के शोषण का चित्रण हुआ है। यहाँ राजनीति से जुड़े पुरुष नारी को दुर्बल, अदूरदर्शी और कम बुद्धि का मानकर उसके

232 गोमा हँसती है – मैत्रेयी पुष्पा – 'शतरंज के खिलाड़ी' कहानी – पृष्ठ 21
233 ललमनियाँ – मैत्रेयी पुष्पा – 'सेंध' कहानी किताबघर प्रकाशन, 1996 – पृष्ठ 42
234 ललमनियाँ – मैत्रेयी पुष्पा – 'सेंध' कहानी किताबघर प्रकाशन, 1996 – पृष्ठ 21

शोषण की कारगुजारियों में लगे रहते हैं। 'मैंने महाभारत देखा था' की ब्रजेश उर्फ ब्रजबाला खिलाड़ी है, उसे राजनीति से कोई लेना–देना नहीं, लेकिन वह एक स्त्री शन्तो के सम्पर्क में आती है जो अपने पिता और भाई के दबाव में कुछ भी करने को मजबूर है। शन्तो राजनीति से जुड़ी महिलाओं को जानती है जिनकी मध्यस्थता से लड़कियाँ नेताओं तक पहुँचायी जाती हैं। शन्तों, ब्रजेश से कहती है कि सभी को बुरी नज़र से देखना ठीक नहीं है। वह उसे बताती है–**"सिरसा राजनीति का गढ़ है। यहाँ हमारा सम्पर्क बड़े–बड़े नेताओं और हैसियत वाले लोगों से हो सकता है। लोकसेवक जी कितनी ही लड़कियों और औरतों को राजनीति में ला चुके हैं। तूने सबको बुरी नज़र से क्यों देखा।"**[235] शन्तो, ब्रजेश के सामने ही कई राजनीति से जुड़ी औरतों को फोन करके बताती है कि **"उसके साथ उसकी एक सहेली आई है, भाषण दे लेती है। खिलाड़ी भी है। उसका कद लम्बा है, रंग गोरा है। सुनहरे बाल हैं।"**[236]

लोकसेवक जी की उपस्थिति में ब्रजेश उर्फ ब्रजबाला की उपलब्धियों तथा जोश–खरोश की खूब प्रशंसा होती है, लेकिन जागरूक और बुद्धिमान ब्रजेश उनके जाल में नहीं फँसती। वह जानती है कि **"राजनीति के आगोश में तो सब कुछ है–ईनाम, खिताब, नौकरी, तरक्की, बड़े से बड़े पद, मगर शन्तो के आसपास राजनीति के सदस्यों के झुंड के झुंड है, जो लड़कियों से मधुमक्खियों की तरह चिपट जाना चाहते हैं। एक न एक नया आदमी रात का न्यौता देता हुआ खड़ा मिलता है। इनकी सन्तुष्टि हमें चीर–फाड़कर रख देगी।"**[237] मैत्रेयी पुष्पा की यह स्त्री सब जान चुकी है कि स्त्री के शोषण के लिए राजनीति का लम्बा–चौड़ा जाल सर्वत्र फैला है। राजनीतिज्ञ स्त्री को राजनीति में लाकर, फिर उसे अपाहिज बनाकर शोषण करने की जुगत में पूरी सतर्कता के साथ लगे हैं। अतः वह शन्तो की मध्यस्थता के चलते भी राजनीति के जाल में नहीं फँसती।

3.9 दहेज प्रथा

---

235 पियरी का सपना – मैत्रेयी पुष्पा – 'मैंने महाभारत देखा था' कहानी – पृष्ठ 138

236 पियरी का सपना – मैत्रेयी पुष्पा – 'मैंने महाभारत देखा था' कहानी – पृष्ठ 138

237 पियरी का सपना – मैत्रेयी पुष्पा – 'मैंने महाभारत देखा था' कहानी – पृष्ठ 139

दहेज प्रथा आज की स्थिति में और भी प्रचंड क्यों होती जा रही है, इस बात को लेकर अनेक अध्ययनों का निष्कर्ष प्रस्तुत करती हुई क्षमा शर्मा खिलती हैं–**"समाज जिसका काला धन बढ़ा है, दहेज भी उतना ही बढ़ा है। स्त्रियों के घरेलू काम को काम नहीं माना जाता। दहेज देने के लिए पिताओं को कर्ज लेना पड़ता है, जमीन–जायदाद गिरवी रखनी पड़ती है, जबकि लड़के वाले लड़के को पालने और उसकी शिक्षा पर हुए खर्च का हवाला देते पाए गए। अधिक शिक्षित लड़का यानी अधिक दहेज"।**[238] आश्चर्य की बात तो यह कि बहू–बेटियों को आत्महत्या के लिए मजबूर करने वाले घरों के बेटे को दहेज देकर दूसरी शादी के लिए, अपनी योग्य और सुशिक्षिता बेटी का रिश्ता स्वीकार करने वाले माता–पिता भी समाज में कम नहीं हैं। यदि दहेज हत्या के लिए दोषी परिवार का सामाजिक बहिष्कार करने की परम्परा चल पड़ती तो सम्भव है कि दहेज के दानव की रफ्तार कुछ कम होती, परन्तु व्यवहार में ऐसा नहीं होता। जिस युवक की पत्नी दहेज के उत्पीड़न को लेकर जल मरती है उसके घर के लोग उस मृत युवती के चरित्र को लेकर मनगढ़ंत दोष प्रचारित कर अपना उल्लू सीधा करते हैं और बेटी के ब्याह से पिण्ड छुड़ाने की इच्छा रखने वाले माता–पिता के लिए इतना काफी होता है।

बेटी पैदा होने पर गरीब तथा धनी दोनों वर्गों से सम्बन्धित माता–पिता अत्यधिक आतंकित रहते हैं। तुलनात्मक दृष्टि से देखा जाय तो आर्थिक रूप से विपन्न माता–पिता कम तनाव में रहते हैं, यदि उनकी सुन्दर तथा यौवन सम्पन्न पुत्री के लिए कोई ठीक–ठाक खरीदार मिल जाता है। धनी माता–पिता को तो दहेज देना ही है, चाहे दहेज लोभी समझदार और दूरदृष्टा हों अथवा मात्र धन के लालची। मैत्रेयी पुष्पा को ये बातें यौवनावस्था से ही मालूम रही हैं, क्योंकि उनकी कृति 'कस्तूरी कुंडल बसै' के अनुसार उनकी माँ आठ सौ रूपये देकर खरीदी गई स्त्री है जो पढ़ा–लिखा तथा अच्छी नौकरी वाला वर अपनी बेटी मैत्रेयी के लिए खोजना चाहती है, उनकी माँ से उनकी दृष्टि से उपयुक्त लोग बात करना तक पसन्द नहीं करते कि वह विधवा धन कहाँ से देगी। मैत्रेयी माँ की सारी दुविधा समझती है और तभी वह किसान के बेटे से ब्याह करने की बात कहती है। अपनी

---

238 स्त्रीवादी विमर्श : समाज और साहित्य – क्षमा शर्मा राजकमल प्रकाशन, नई दिल्ली, 2012 – पृष्ठ 68

कहानियों 'साँप–सीढ़ी' तथा 'सहचर' में भी मैत्रेयी पुष्पा ने दहेज की सामाजिक कुप्रथा पर करारा प्रहार किया है। उनकी कहानियों के दहेज के लालची पिता बिना दहेज के विवाह की बात करके भी लड़की वालों को 'भांवरे पड़ने' के दस्तूर तथा विदाई के नाम पर अच्छी रकम वसूल लेते हैं। बेटी के पिता को समाज में अपनी इज्जत बचाने के लिए विवश होकर सब करना पड़ता है। अतः पितृसत्तात्मक समाज व्यवस्था को दहेज–प्रथा की पोषक व्यवस्था के रूप में देखना अनुचित नहीं है। विचारणीय बिन्दु तो यह भी है कि विवाह को लेकर समाज में लड़के–लड़की के लिए अलग–अलग मानदण्ड निर्धारित हैं। लड़का अपनी जाति से निम्न जाति की कन्या से विवाह करता है तो उस दम्पति का समाज स्वागत करता है। लोग लड़के के माता–पिता की थोड़ी भी नाराजगी को यह कहकर हवा में उड़ा देते हैं कि शादी तो लड़के को करनी है, उसे जैसी जीवनसंगिनी चाहिए, वैसी उसने चुन ली है। अच्छे–बुरे का भागी वही बनेगा। 'पगला गई है भागवती' कहानी की भागवती की जिज्जी का लड़का जो विवाह करता है, थोड़े से विरोध के बाद पिता, बेटे–बहू का जमकर स्वागत–सत्कार करता है किन्तु लड़कियों की स्थिति भिन्न है। 'ताला खुला है पापा' की बिन्दो जातीय विभेद के चलते अरविन्द से ब्याह नहीं कर पाती और पिटती भी है। इसी प्रकार 'सफर के बीच' की हेमंती इच्छित विवाह न कर पाने के कारण आत्महत्या कर लेती है, क्योंकि उसका किसी अन्य युवक से ब्याह करने की तैयारी चल रही होती है। 'मन नहीं दस–बीस' की चन्दना भी विजातीय सम्बन्ध की जिद करने के कारण वांछित ब्याह नहीं कर पाती। जो कन्याएँ माता–पिता और समाज की परवाह न कर विवाह कर भी लेती हैं तो उनके माता–पिता सामाजिक प्रतिष्ठा की दुहाई देकर उन्हें मारने तक की जहमत उठा लेते हैं। यहाँ यह कहना अनुचित न होगा कि वर्तमान समय की युवतियाँ इच्छित ब्याह करने का खतरा निरन्तर उठा रही हैं, चाहे विवाह अन्तर्जातीय ही क्यों न हो, और ये विवाह सफल भी हो रहे हैं। लगता है कि सुशिक्षित वर–कन्या अपना भला–बुरा समझते हुए इच्छित ब्याह करते हैं और माता–पिता भी सामाजिक प्रतिष्ठा की झूठी मान्यताओं से ऊपर उठ चुके हैं। इस प्रकार पसन्द पर आधारित विवाहों के चलन से दाम्पत्य सुख बढ़ रहा है, दहेज प्रथा कमजोर पड़ रही है और अनमेल विवाह जैसी समस्या भी हतोत्साहित हो रही है। आपसी सोच–समझ से ब्याह करने

वाले पति–पत्नी यदि एक–दूसरे की भावनाओं को ठीक–ठीक समझते हैं और एक–दूसरे का पूरा–पूरा ध्यान रखते हैं तो गृह क्लेश भी प्रायः नहीं होता है।

निष्कर्ष

मैत्रेयी पुष्पा ने एक ओर, अपनी कथाकृतियों में ग्रामीण तथा शहरी जीवन से सम्बन्धित स्त्री के जीवन की समस्याओं के यथार्थ को अभिव्यक्त किया है और दूसरी ओर, उनकी अनेक कहानियाँ उनके अपने स्वयं के जीवन की यातनाओं तथा खट्टे–मीठे अनुभवों की अभिव्यक्ति भी हैं। उपन्यासों में भी मैत्रेयी पुष्पा के जीवनानुभव तथा व्यथायें व्यक्त हुई हैं, लेकिन वहाँ माध्यम उपन्यास का कोई न कोई नारी चरित्र है। मैत्रेयी पुष्पा की कहानियों में स्त्री चरित्र बड़ी संख्या में प्रयुक्त हुए हैं, लेकिन स्त्री विमर्श की दृष्टि से चर्चित स्त्री चरित्रों में वसुमती, जैमन्ती, सावित्री (रायप्रवीण), केतकी, भागवती, बिन्नी, बिंदो, चंदना, सिस्टर डिसूजा, शांति, विरमा, गिरिजा, लल्लन, गोमा आदि कुछ ऐसी स्त्रियाँ हैं जो पुरुष समाज द्वारा निरन्तर किए जाते रहने वाले बहुविध परम्परागत शोषण का विरोध करने की दृष्टि से जागरूक हो चुकी हैं। इन्होंने अपने अस्तित्त्व की चिन्ता न कर शोषण के विरूद्ध डटकर संघर्ष किया है।

पितृसत्तात्मक समाज व्यवस्था में ढले–पके पुरुषों के साथ–साथ इस व्यवस्था के रंग में रंगी स्त्रियाँ भी स्त्रियों का बहुविध शोषण करती हैं, जिनमें माँ, जेठानी तथा ननदें प्रमुख हैं। उपन्यासों की ही भाँति अपनी कहानियों के माध्यम से स्त्री शोषण के लिए जिम्मेदार पितृसत्तात्मक व्यवस्था तथा पुरुष के वर्चस्व से सम्बन्धित समाज के प्रति मैत्रेयी पुष्पा ने जो भी कुछ कहा है, पूरी बेबाकी, हिम्मत और निश्छलता के साथ कहा है और ऐसा करते समय उन्होंने श्लीलता और अश्लीलता जैसी किसी बात का कतई ध्यान नहीं रखा है। वास्तव में यथार्थ तो ऐसा ही होता है। अपनी कथाकृतियों में मैत्रेयी पुष्पा और उनका चिन्तन समग्रतः व्याप्त है। आपकी आत्मकथा 'गुड़िया भीतर गुड़िया' का एक बार अध्ययन करने के उपरान्त मैत्रेयी पुष्पा का पाठक वर्ग और उनके आलोचकों का उन्हें समझना सहज होगा, ऐसा मेरा मानना है। अपनी आत्मकथा में जो उन्मुक्तता मैत्रेयी ने प्रस्तुत की है, ऐसा करना सामान्य व्यक्तित्त्व के वश की बात नहीं है। अपने उपन्यासों, कहानियों, अन्य विधाओं तथा विचारप्रधान निबन्धों में मैत्रेयी पुष्पा का अभीष्ट नारी की मुक्ति रहा है।

मुक्ति पुरुष या पुरुष समाज से नहीं, अमानवीय तथा अंधविश्वासों पर आधारित समाज और उसकी मान्यताओं से। उन सब मान्यताओं, मूल्यों और उस सोच से जो नारी को पुरुष की अपेक्षा तुच्छ और हीन मानती हैं। शोषण और मानवीय वर्चस्व के संघर्ष करने के लिए स्त्री समाज को जगाना मैत्रेयी पुष्पा कभी भूलती नहीं है। अपने कथा साहित्य में मैत्रेयी पुष्पा ने कथ्य की विविधता का सर्वत्र ध्यान रखा है। कथ्य की विविधता की ही तरह उनके उपन्यासों और कहानियों में भाषा तथा शैली की विविधता भी सर्वत्र देखी जा सकती है।

यद्यपि दशकों से चली आ रही नारी–मुक्ति सम्बन्धी हलचलों, आन्दोलनों, स्त्री शिक्षा की सहज उपलब्धता, सरकारी प्रयासों और बड़े पैमाने पर हो रही स्त्री विमर्श सम्बन्धी चर्चाओं के चलते आज की नारियाँ अपेक्षाकृत अच्छी स्थिति में हैं और चैन की सांस लेती देखी जा सकती हैं, लेकिन ज्यों–ज्यों हम बीसवीं शताब्दी के सातवें दशक से पीछे की ओर चलते हैं तो हमारे सम्मुख नारी के यंत्रणामय जीवन के लिए उत्तरदायी अनेक कारक, मान्यताएँ, मूल्य एवं परिस्थितियाँ साकार होती चलती हैं। हम पाते हैं कि हमारी परम्परागत समाज व्यवस्था जो पितृसत्ता पर आधारित है उसके मूल में ही नारी जीवन की सभी समस्याएँ आश्रय पाए हुए हैं। नारी को पशुवत, हीन प्राणी तथा उपभोग की वस्तु बनाए रखने के लिए परिवार व्यवस्था, धर्म, रीति–रिवाजों और यहाँ तक कि सम्पूर्ण समाजशास्त्र इतना सोच–समझकर बनाया गया है कि स्त्री को बाध्य होकर अपनी स्थिति पर सन्तोष करना पड़ा है।